कुरुक्षेत्र

फरवरी 1984 मूल्य 1.50 रु०

नारायणपुरम का बहुमुखी डेयरी फार्म

यह एक ऐसी दुग्धशाला की कहानी है जो आदर्श बहूद्देशीय दुग्धशाला के रूप में विकसित हुई ।

यह सब उस समय शुरू हुआ जब कि मद्रास के निकट नारायणपुरम में इण्डियन इन्स्टीट्यूट आफ टैक्नालाजी (आई० आई० टी०) के विद्यार्थियों ने शिकायत की कि उन्हें अच्छा दूध नहीं मिलता । चाहे रसोइए कितनी बार प्रयत्न क्यों न करें लेकिन खाना खराब ही बनता था और आई० आई० टी० के खराब भोजन की चर्चा सब करने लगे। कुछ न कुछ तो करना ही था ।

और कुछ किया भी गया । एक छोटी सी दुग्धशाला शुरू की गई जिसमें कुछ अच्छी नस्ल की गाय तथा भैंसें रखी गईं । ग्रामीण विकास केन्द्र ने इस प्रयोग को चलाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली ।

चाहे छोटी सी सही, यह इकाई नारायणपुरम के कृषकों को उत्साहित करने वाले एक आकर्षक उदाहरण के रूप में उभरी ।

अब इस डेयरी में 34 गायें, तथा 5 भैंसें हैं । इसका कुल उत्पादन 200 लिटर है जो आई० आई० टी० के छात्रावास को जाता है। डेयरी में एक ऐसी गाय है जो प्रतिदिन 22 लिटर दूध देती है। इस डेयरी में 18 बछड़े–बछियों का जन्म हुआ है जो कुछ ही महीनों में पूर्ण रूप से विकसित हो जाएंगे ।

नारायणपुरम डेयरी में कुछ भी व्यर्थ नहीं जाता। डेयरी का गोबर बायो (जैव) गैस संयन्त्र में चला जाता है जिससे भोजनालय (कैंटीन) बेकरी तथा ईंटों के भट्ठे की ऊर्जा की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है ।

और तब इसने अपने में विविधता लानी शुरू की ।

डेयरी के साथ जुड़ी एक बेकरी छात्रावास तथा आसपास के गांवों को डबलरोटी विस्कुट "बफ" तथा विभिन्न प्रकार की खाने–पीने की वस्तुएं बनाकर बेचती है ।

जिस क्षेत्र में यह डेयरी स्थापित की गई है वह प्राकृतिक चारे से भरपूर है । इसके अलावा डेयरी के अहाते में एक आधुनिक चावल मिल ने काम करना शुरू कर दिया जो भूसी (ब्रान) उपलब्ध कराती है जो पशुओं के लिए अति पौष्टिक है । डेयरी के शेड आधुनिक हैं तथा इनका कुल क्षेत्रफल 600 वर्ग मीटर है । एक पशु चिकित्सा केन्द्र भी तेजी से तैयार हो रहा है ।

इस छोटी सी डेयरी की सफलता तथा पशु चिकित्सा सेवाओं की उपलब्धता ने नारायणपुरम के आसपास के ग्रामीणों को बढ़िया गाएं तथा भैंसें हासिल करने के लिए प्रोत्साहित किया । यह केन्द्र मवेशी खरीदने के लिए योग्य कृषकों को बैंक ऋण उपलब्ध करा रहा है ।

पहले से काम कर रही इकाइयों के साथ ही इस डेयरी की गतिविधियों को नई दिशाएं देने का कार्य समाप्त नहीं हो गया। इन लोगों ने एक मुर्गीपालन फार्म भी शुरु किया । इस समय इसमें 300 मुर्गियां हैं जो प्रतिदिन 200 अण्डे देती हैं।

खैर, यह बात तो बिलकुल स्वाभाविक है कि इस केन्द्र को चलाने वाले आई० आई० टी० के छात्र ही सारे अण्डे खा जाते हैं तथा सारा दूध पी लेते हैं।

इससे बढ़कर बात यह है कि जो डेयरी उदयीमान इन्जीनियरों की क्षुब्धता को दूर करने के प्रयास के रूप में शुरू की गई थी वह अब नारायणपुरम के तथा आसपास के पुराने ढंग के कृषकों में नई जागृति की उत्प्रेरक के रूप में मंजरित होकर सामने आई है । □

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास का प्रमुख मासिक

वर्ष 29 | माघ–फाल्गुन 1905 | अंक 4

इस अंक में | पृष्ठ संख्या

नारायणपुरम का बहुमुखी डेयरी फार्म — आवरण पृष्ठ 2

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमजोर वर्ग — 2
डा० बद्री विशाल त्रिपाठी

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम—मासिक रिपोर्ट — 8

गांव (कविता) — 9
हेमन्त कुमार चावड़ा

गांव-गांव में गोबर गैस — 10
रमेशदत्त शर्मा

गांव की दहलीज पर नई सुबह — 12
जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

भोजन, खाद और रोशनी साथ-साथ — 15
राम अधीर

सींगों को तराशने वाले ये खूबसूरत हाथ — 16
विमला रस्तोगी

येलमनचिल्ली—क्षितिज पर नया सूर्य — 18

फागुन ने (कविता) — 20
डा० सुधा गुप्ता

सामूहिक प्रयासों का फल—बंजर भूमि से भरपूर फसल — 21
गोपाल

दियासलाई—छोटा उद्योग बड़ा सहारा — 22

फ्लुओरोसिस — 24

कम खर्च में पौष्टिक खुराक — 25
आशा रानी व्होरा

रमला (कहानी) — 26
प्रेम शीला गुप्ता

युक्लिप्टस—दोस्त या दुश्मन ? — 29
वीरेन्द्र गोहिल

केन्द्र के समाचार — 31

चलता-फिरता गोबर गैस प्लांट — आवरण पृष्ठ 3
शक्ति त्रिवेदी

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : **सम्पादक, कुरुक्षेत्र** (हिन्दी), ग्रामीण विकास मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406

एक प्रति : 1.50 रु०,
वार्षिक चन्दा : 15 रु०

व्यापार व्यवस्थापक : लेख राज बत्रा
सहायक व्यापार व्यवस्थापक : एडवर्ड बेक
सहायक निदेशक (उत्पादन) : के० आर० कृष्णन

सम्पादक : जयन्त जहांगीर सिंह
उपसम्पादक : राधे लाल
आवरण पृष्ठ : मघजी परमार

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमजोर वर्ग

डा० बद्री विशाल त्रिपाठी

भारतीय अर्थव्यवस्था में आजीविका हेतु कृषि की प्रधानता के कारण भूमि संसाधन उत्पादन और रोजगार का अच्छा साधन तो है ही साथ ही साथ ग्रामीण जटिलता का प्रमुख घटक है । भू-स्वामित्व के असमान वितरण के कारण देश की कृषि अर्थ-व्यवस्था की संरचना त्रिस्तरीय पिरामिड के आकार की है जिसके आधार पर लघु और अत्यन्त लघु कृषक बहुतायत में हैं । बीच में अपेक्षाकृत कम संख्या में मध्यम कृषक हैं और शीर्ष पर चन्द सुविधा सम्पन्न बड़े कृषक हैं जो मुख्यत: ब्रिटिश कालीन व्यवस्था जन्य स्वामित्व से प्राप्त उपहार से सुखपूर्वक जीवनयापन करते हैं । अत्यन्त छोटें किसानों को, खेतिहार संरचना में निम्नतम स्तर पर होने के कारण सीमान्त कृषक भी कहा जाता है । भारत में लघु और सीमान्त कृषकों का अस्तित्व तथ्यात्मक तो है ही साथ ही 'लघु एवं सीमान्त कृषक' वाक्यांश एक विशिष्ट अवधारणा के रूप में भी प्रयुक्त होता है । यह खेतिहर संरचना के भूमियुक्त लोगों के उस वर्ग का बोध कराता है जिसकी जोत का आकार अत्यन्त छोटा है और जो कड़ी मेहनत के बाद भी अपनी जोत से अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त आय नहीं कमा पाते हैं । लघु कृषक अभिकरण की परिभाषा के अनुसार लघु कृषक वे हैं जिनकी सिंचित जोत का आकार 1.60 एकड़ से 3.20 एकड़ तक और असिंचित जोत का आकार 2.50 एकड़ से 5.00 एकड़ तक है और सीमान्त कृषक वे हैं जिनकी सिंचित जोत का आकार 1.6 एकड़ और असिंचित जोत का आकार 2.5 एकड़ तक है । मध्यम कृषक वे हैं जिनकी जोत का आकार 5 एकड़ से 9.99 एकड़ तक है तथा बड़े किसानों की कोटि में 10 एकड़ और उससे ऊपर की जोत स्वामित्व वाले कास्तकार हैं ।

भू-स्वामित्व का वितरण : देश की खेतिहर संरचना में भू-स्वामित्व का वितरण अत्यन्त वैषम्यपूर्ण है । अधि-कांश कृषकों के पास कृषित भूमि का अत्यन्त कम भाग है जब कि थोड़े से कृषकों के स्वामित्व में कृषित भूमि का अधिकांश भाग है । वर्ष 1953–54 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के आठवें दौर के अनुसार कुल ग्रामीण परिवारों के 12.57 प्रतिशत परिवार बड़े किसानों की कोटि में थे जिनके स्वामित्व में कुल कृषित क्षेत्र का 65.28 प्रतिशत भाग था । मध्यम कृषक की कोटि में कुल ग्रामीण परिवारों के 11.50 प्रतिशत परिवार थे जिनके पास कुल कृषित भूमि का 18.40 प्रतिशत भाग था और कुल ग्रामीण परिवारों के 52.64 प्रतिशत परिवार लघु और सीमान्त कृषिक की कोटि में थे जिनके पास कुल कृषित भूमि का मात्र 16.32 प्रतिशत भाग था । इससे ग्रामीण क्षेत्र के आधारिक साधन भूमि के असमान वितरण पर प्रकाश पड़ता है । कुल सामान्य विचलन सहित लगभग इसी प्रकार के निष्कर्ष राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के सत्रहवें दौर, 1961–62, से प्राप्त हुए हैं । पुन: 1970–71 की प्रथम कृषि गणना के अनुसार कुल ग्रामीण परिवारों के 11.52 प्रतिशत परिवार बड़े किसानों की कोटि में थे जिनके स्वामित्व में कुल कृषित भूमि का 53.46 प्रतिशत भाग था । मध्यम कृषकों की कोटि में 18.72 प्रतिशत परिवार थे जिनके स्वामित्व में 25.84 प्रतिशत कृषित क्षेत्र था और 69.67 प्रतिशत परिवार लघु और सीमान्त किसानों की कोटि में थे जिनकी जोत का आकार 5.00 एकड़ से कम था और इनके स्वामित्व में कृषित भूमि का केवल 20.70 प्रतिशत भाग था । इस विश्लेषण से यह प्रतीत होता है कि देश की खेतिहर संरचना में बड़े किसानों का वर्चस्व लगभग पूर्ववत बना है और पिछले 25 वर्षों से जोत के आकार में ह्रास हुआ है जिससे छोटी जोतों की संख्या बढ़ती जा रही है । इसका कारण है जनसंख्या वृद्धि के परिणामस्वरूप जोतों का उप-विभाजित होना और नवीन कृषि निवेशों के प्रयोग से सम्पन्न हुए मध्यम और बड़े कृषकों द्वारा भूमि का खरीदा जाना । कुछ मध्यम किसान कतिपय कारणों से अपनी भूमि बेच देते हैं । फलत: वे छोटें किसानों की कोटि में आ जाते हैं और कुछ अत्यन्त छोटें किसान अपनी भूमि बेचकर खेतिहर मजदूरों की कोटि में आ जाते हैं । भूमि की भूख सामान्य रूप से न केवल बड़े और मध्यम कृषकों में बढ़ी है, बल्कि ग्रामीण साहूकार, व्यापारी वर्ग और सेवा क्षेत्र के कतिपय लोग

अपनी स्थायी 'सम्पति बढ़ाने के लिए इसके प्रति लालायित हुए हैं भले ही वे स्वयं उस भूमि पर खेती न करें।

आर्थिक स्थिति : योजनाकाल में लघु और सीमान्त कृषकों की आर्थिक स्थिति में कोई मौलिक सुधार नहीं हो सका। लघु और सीमान्त कृषकों की आर्थिक स्थिति की माप के अत्यन्त कम संख्यात्मक आंकड़े उपलब्ध हैं। परन्तु फिर भी उनकी अवस्था का आभास कुछ प्रकाशित तथ्यों से होता है। नेशनल काउन्सिल आफ एप्लाइड इकानामिक रिसर्च के वर्ष 1968–69 से 1970–71 के एक अध्ययन के अनुसार 1970–71 में कुल ग्रामीण परिवारों के 18.5 प्रतिशत परिवारों की जोत का आकार 2.5 एकड़ से कम था। इन परिवारों की सभी स्रोतों से मिलने वाली आय 1970–71 में 1630 रुपये थी। यदि प्रत्येक परिवार की औसत संख्या सदस्य 5 मानी जाए तो वे सभी परिवार गरीबी की रेखा से नीचे पड़ते हैं, क्योंकि तत्कालीन कीमतों पर 40 रुपये प्रति-व्यक्ति प्रतिमाह उपभोग व्यय न्यूनतम जीवनयापन हेतु आवश्यक था। इस आधार पर प्रत्येक परिवार के लिए न्यूनतम जीवनयापन हेतु 2400 रुपये वार्षिक आय जरूरी थी जबकि सभी स्रोतों से प्राप्त होने वाली आय इन परिवारों की इस स्तर से अत्यन्त कम थी। इनकी कमजोर आर्थिक स्थिति का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि 1970–71 में ग्रामीण समाज के सभी वर्गों के परिवारों की सभी स्रोतों से मिलने वाली औसत वार्षिक आय 2649 रुपये थी जबकि सीमान्त कृषक परिवारों की सभी स्रोतों से मिलने वाली औसत वार्षिक आय 2446 रुपये थी अर्थात् वे भी किसी प्रकार ही अपना जीवनयापन कर सकने की स्थिति में थे। सम्प्रति यह माना जाता है कि ग्रामीण क्षेत्र की लगभग 50 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे है। ग्रामीण क्षेत्र में इस समय कुल 802 लाख परिवारों में से 220 लाख परिवार भूमिहीन हैं और 263 लाख ग्रामीण परिवार सीमान्त किसानों की कोटि में हैं। कतितय अपवाद स्वरूप परिवारों को छोड़कर सभी 483 परिवार गरीब परिवारों की कोटि में हैं जो अपनी अनिवार्यताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं। लघु कृषकों की स्थिति सीमान्त किसानों और खेतिहर मजदूरों की तुलना में कुछ बेहतर है जो स्वाभाविक ही है। परन्तु लघु किसानों की जोत भी कतिपय सिंचित और उपजाऊ क्षेत्रों को छोड़कर अन्यत्र परिवार के भरण-पोषण भर की आय प्रदान करने में असमर्थ है। इस कारण स्वयं की जोत पर कृषि कार्य करने के साथ-साथ वे भी सीमान्त कृषकों की भांति अपनी आय का कुछ भाग कृषि की भांति मजदूरी से कमाते हैं। राजकीय आंकड़े तो भूमिहीन मजदूरों, ग्रामीण दस्तकारों और सीमान्त कृषकों की भांति लघु किसानों को भी गरीबी की रेखा से नीचे मानते हैं। लघु और सीमान्त किसानों की आर्थिक स्थिति में योजना काल में कोई आधारिक सुधार नहीं हो सका। इस संदर्भ में नेशनल काउन्सिल आफ एप्लाइड इकानामिक रिसर्च के उक्त अध्ययन के निष्कर्षों का उल्लेख उनकी आर्थिक स्थिति में मंद प्रगति का उल्लेख करता है। उस अध्ययन के अनुसार 2.5 एकड़ से छोटी जोत वाले कृषकों की औसत वार्षिक आय सभी स्रोतों से 1968-69 में 1618 रु० थी जो 1970-71 में 1630 रु० ही हो सकी। इस प्रकार लघु कृषकों की समस्त स्रोतों से मिलने वाली आय 1968-69 में 2059 रुपये थी जो 1970-71 में बढ़कर 2446 रुपये ही हो सकी। यह उनकी मंद आर्थिक प्रगति का स्पष्ट संकेत करता है। कुछ समान परिवर्तनों सहित लगभग यही स्थिति आज भी बनी हुई है और वे ग्रामीण समुदाय के गरीब वर्ग के अभिन्न अंग के रूप में बने हैं। हां, यह अवश्य है कि लघु और सीमान्त कृषकों की स्थिति उन तमाम ग्रामीण गरीबों से अच्छी है जिनके पास उत्पादन का कोई ठोस आधार नहीं है।

परन्तु इससे संतोष नहीं किया जाना चाहिए। इन वर्गों से यह अपेक्षा की जानी चाहिए कि अपनी जोत से वे इतना उत्पादन कर लें कि अपने परिवार का भरण-पोषण करने के साथ-साथ अतिरिक्त सृजित कर सकने की स्थिति में हो जाएं।

लघु एवं सीमान्त कृषकों की स्थिति में सुधार

लघु और सीमान्त कृषकों की स्थिति में सुधार न हो सकने का सर्व-प्रमुख कारण यह है कि इनके पास जोत पर आधारिक सुधार कर सकने के लिए पूंजी की कमी है। सदियों से दयनीय आर्थिक स्थिति के कारण उनके परिवार का शैक्षणिक स्तर अत्यन्त नीचा है फलतः उन गैर-कृषि स्रोतों से आय प्राप्त कर सकने की संभावना अत्यन्त क्षीण रहती है और यद्यपि कृषि की नवीन तकनीक जोत आकार के प्रति तटस्थ मानी जाती है परन्तु नवीन तकनीक के संघटक तत्व विभिन्न आधुनिक कृषि निविष्टयां अधिक पूंजी की अपेक्षा करती है इस कारण वे जोत आकार से सम्बद्ध हैं और इसी कारण कृषि सुधार परियोजनाओं के लाभ मुख्य रूप से बड़े और मध्यम कोटि के किसान ही उठा सके हैं। बड़े और मध्यम कृषक तो अतिरिक्त सृजित कर सकने की स्थिति में हो गए हैं परन्तु लघु और सीमान्त कृषकों की जोत मात्र निर्वाह का व्यवसाय बनी है। दूसरे कृषि की नवीन तक-नीक की सफलता के कारण पहले के धान बहुल राज्यों यथा पश्चिमी बंगाल, बिहार और उड़ीसा में गेहूं भी होने लगा है और पहले के गेहूं बहुत राज्यों यथा पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में धान भी होने लगा है कृषि का विविधीकरण हुआ है तथापि इसने क्षेत्रीय विषमताओं को जन्म दिया है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, केरल और तमिलनाडु में ही कृषि की नवीन तकनीक सफल हो सकी है। शेष राज्यों का वही परंपरा-गत तरीका अब भी बना हुआ है। अतएव वहां सीमान्त और लघु किसान की अवस्था दयनीय बनी हुई है। तीसरे योजनाकाल में चतुर्थ योजना के आरंभ तक सिद्धान्त और व्यवहाररूप में यह धारणा रही है कि समग्र

उत्पादन बढ़ाकर ही समस्त गरीब जनसंख्या के आर्थिक परिवेश में सुधार किया जा सकता है, जिसके परिणाम अधिक उत्साहवर्धक नहीं रहे। वितरणात्मक न्याय पर जोर न होने के कारण गरीब और अमीर के बीच दूरी बढ़ती गयी। आर्थिक लाभों के असमान वितरण ने गरीब को अधिक गरीब और अमीर को अधिक अमीर बना दिया। वास्तव में कोई भी विकास नीति जो वितरणात्मक न्याय के प्रति तटस्थ हो वह स्वयं में विरोधाभास युक्त और विनाशकारी है। अतएव आर्थिक लाभों के वितरण के पक्ष को उत्पादन नीति से अलग नहीं किया जा सकता है।

राजकीय प्रयास :—चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के आरंभ समय जब आयोजन की मूल संकल्पना में परिवर्तन किया गया और सामाजिक न्याय के साथ विकास को योजना का मूल प्रेरक तत्व माना गया तब यह आवश्यक समझा गया कि समाज के निर्धन और कमजोर वर्ग, जिनमें ग्रामीण समाज के लघु एवं सीमान्त कृषक ग्रामीण दस्तकार, खेतिहर मजदूर, सम्मिलित हैं, के विकास के लिए कुछ प्रत्यक्ष कार्यक्रम चलाए जाएं। इसके प्रति विभिन्न समितियों और अध्ययनों ने भी जोर दिया। अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति (1969) ने लघु और सीमान्त किसानों की स्थिति में सुधार करने के लिए कुछ प्रत्यक्ष उपायों की संस्तुति की।

समिति के प्रतिवेदन में कहा गया कि कृषि अर्थव्यवस्था के कम सुविधा सम्पन्न किसानों को राजकीय और संस्थागत अधिकरणों से सहायता दी जानी चाहिए ताकि वे अपनी उत्पादन क्षमता में सुधार कर सकें और नवीन कृषि प्रविधियों को अपनाकर अतिरिक्त आय अर्जित कर सकें। समिति का यह निष्कर्ष था कि यदि विकास कार्यक्रमों के लाभ समाज के कुछ लोगों को ही मिलता रहे और समाज का बहुसंख्यक समुदाय इससे वंचित रह गया तो यह ग्रामीण समाज के स्वभाविक प्रचलन में बाधा उत्पन्न होगी और यह कृषि उत्पादन वृद्धि के राष्ट्रीय प्रयास को भी हतोत्साहित करेगा। इसी प्रकार लघु एवं सीमान्त कृषकों तथा खेतिहर मजदूरों की हालत सुधार की अपरिहार्यता और उसके महत्व को ध्यान में रखते हुए वेंटकापैया समिति ने भी इन वर्गों के लिए विशिष्ट अभिकरणों स्थापना की सिफारिश की। अब तक इन कमजोर वर्गों के सुधारार्थ स्थापित विभिन्न उपकरणों के निष्पादन की संक्षिप्त व्याख्या निम्नवत है :

लघु एवं सीमांत कृषक विकास अभिकरण :—विभिन्न समितियों और अध्ययनों के सुझावों को कार्यान्वित करने और समाज के चिरकाल से शोषित और पिछड़े वर्गों के प्रति आवश्यक दायित्व को पूरा करने की पृष्ठभूमि में लघु एवं सीमान्त कृषकों तथा खेतिहर मजदूरों के सहायतार्थ 1971 में 'लघु किसान विकास अभिकरण' और 'सीमान्त कृषक तथा खेतिहर मजदूर विकास अभिकरण' स्थापित किया गया। इन अभिकरणों का कार्य छोटे और सीमान्त कृषकों को पहचानना है उनके लिए उपयुक्त नीतियों का कार्यक्रम तैयार करना, पहचाने गए कृषकों को मैट्रिक संस्थाओं से वित्तीय सुविधा प्राप्त कराने में मदद करना, कृषि उत्पादन और विपणन के संदर्भ में अनुकूल सेवा प्रदान करना और कृषि कार्य के साथ-साथ अतिरिक्त आय की प्राप्ति हेतु कृषि से सम्बद्ध सहायक व्यवसायों की सुविधा हेतु वित्तीय व्यवस्था करना है। चतुर्थ पंचवर्षीय योजनावधि में 46 लघु कृषक और 41 सीमान्त कृषक एवं खेतिहर मजदूर विकास परियोजनाएं चलाई गई और प्रत्येक के लिए व्यय योग्य राशि क्रमशः 1.5 करोड़ और 1.0 करोड़ रखी गयी। सहायता के लिए लघु व सीमान्त कृषकों के पहचान का कार्य राजस्व कर्मचारियों की सहायता से खंड विकास अधिकारियों द्वारा भूमि के कार्ड में दिखाई गयी कृषक की भूमि के आधार पर किया जाता है। चुने हुए लघु व सीमान्त कृषकों को आर्थिक सहायता प्रत्यक्ष रूप से मुद्रा के रूप में नहीं अपितु उनके बैंक खाते में हस्तांतरित कर दी जाती है जो वस्तु रूप में ही कृषकों के पास पहुंचती है। प्रदत मौद्रिक ऋण में लघु कृषकों को 25 प्रतिशत और सीमान्त कृषकों व खेतिहर मजदूरों को $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। किसी काश्तकार को समूची परियोजना अवधि में अधिक से अधिक 3000 रुपये तक का ही अनुदान दिया जा सकता है। सामुदायिक विकास परियोजनाओं जैसे सामुदायिक सिंचाई कार्य आदि के लिए परियोजना निधि से 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। इन विकास अभिकरणों द्वारा अर्ह कृषकों को विभिन्न चालू खर्चों यथा फसल उत्पादन, बीज उर्वरक, कीटनाशक दवाएं आदि के लिए अल्पकालीन, दुधारू जानवर, भारवाहक पशु, मधुमक्खी भेड़ और मत्स्यपालन के लिए मध्यकालीन और नवीन कुओं के निर्माण, पुराने कुओं के जीर्णोद्धार, भूमि सुधार और विभिन्न कृषि यंत्रों के लिए दीर्घकालीन ऋण दिए जाते हैं। इन विकास अभिकरणों के माध्यम से परियोजना शुरू होने से लेकर मार्च, 1979 तक 163.14 लाख व्यक्तियों को लाभान्वित किया गया, इनमें 25.61 लाख लोग अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जन-जातियों के थे। लघु सिंचाई के अंतर्गत 7.96 लाख, दुधारू पशुपालन के अंतर्गत 5.12 लाख, मुर्गीपालन के अंतर्गत 19 हजार, अन्य पशुपालन के लिए 2.28 लाख और उन्नत कृषि कार्यक्रम के अंतर्गत 55.36 लाख लोगों को लाभ पहुंचा। भारत सरकार ने सहायता के रूप में इन अभिकरणों को 198.39 करोड़ रुपये दिए जिसमें से 196.33 करोड़ रुपये का उपभोग किया गया।

विकास प्रयासों के इतिहास में शायद पहली बार सामाजिक न्याय की संकल्पना के अनुरूप गरीब किसानों की हालत सुधारने का प्रयास किया गया। ये विकास अभिकरण गरीब किसानों की स्थिति सुधारने और उनकी उत्पा-

दिता बढ़ाने में निर्विवाद रूप से सहायक रहे हैं। परन्तु इनकी कार्यप्रणाली और निष्पादन वांछित स्तर तक नहीं रहा है। सर्वप्रथम तो यह कि सहायता पाने के लिए अर्ह व्यक्तियों के पहचान का कार्य राजस्व विभाग के कर्मचारियों की सहायता से खंड विकास अधिकारी और उसके तंत्र पर बिना किसी अतिरिक्त वेतन के सौंपा गया जो पूर्वतः कार्य के बोझ से दबे हुए हैं। इन अभिकरणों के पास पहचान कार्य के लिए अपनी कोई स्वायत संस्था नहीं है। दूसरे, इन अभिकरणों द्वारा सहायता पाने योग्य व्यक्तियों का चुनाव करने में भूमि के राजस्व रिकार्डों का सहारा लिया गया। इस प्रक्रिया में त्रुटि की संभावना संतत बनी रहती है क्योंकि कृषक के भूमि रिकार्डों में दिखाई गई भू-सम्पति और उसकी वास्तविक क्रियात्मक जोत के मध्य महत्वपूर्ण अंतर रहता है। तीसरे एक ओर जहां उपलब्ध साधनों की मात्रा कम होने के कारण सभी पहचाने गए किसानों को आर्थिक सहायता नहीं दी जा सकी वहीं दूसरी ओर सहायता पाने वाले कुछ कास्तकार वर्ष-प्रतिवर्ष सहायता पाते रहे। यह देखने और सोचने का प्रयास कम किया जा रहा है कि जो कास्त-कार सहायता प्राप्त कर रहे हैं उनकी वास्तविक हालत में सुधार हुआ है या नहीं। वे आत्मनिर्भरता की ओर अग्र-सर हो सके हैं या मात्र सहायता का ही लाभ उठा रहे हैं। लक्ष्य तो यही है कि उन्हें आत्मनिर्भर और सक्षम बना दिया जाए और वे अपने आप विकास कर सकने में समर्थ हो जाएं। चौथे, कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए तकनीकी कर्मचारियों की संख्या में वांछित स्तर तक वृद्धि नहीं की जा सकी। इससे कार्यक्रम की सफलता सीमित रही। योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने लघु व सीमान्त कृषकों और खेतिहर मजदूरों से सम्बन्धित इन अभिकरणों के मूल्यांकन की अपनी रिपोर्ट 1979 में प्रकाशित की जिसमें कहा गया कि सिंचाई की छोटी परियोजनाओं की विशेष प्रगति नहीं हुई, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहां विकास खण्ड स्तर पर कार्य के लिए पर्याप्त कर्मचारी नहीं लगाए गए।

समन्वित ग्राम विकास योजना :

देश में 2 अक्तूबर, 1980 से समस्त विकास खंडों में समन्वित ग्राम विकास योजना लागू कर दी गयी है। यह एक व्यापक कार्यक्रम है जिसमें ग्रामीण सुधार के लिए न केवल कृषि विकास के कार्यक्रम हैं बल्कि गैर-कृषि कार्यों के विकास कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं। लघु एवं सीमान्त कृषक विकास अभि-करण मुख्यतः फसल उत्पादन और सहायक व्यावसायों के विकास तक ही सीमित रहे हैं। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि केवल कृषि विकास कार्यक्रमों के द्वारा समस्त खेति-हर परिवारों की हालत में सुधार नहीं किया जा सकता। इसलिए समन्वित ग्राम विकास योजना के अंतर्गत गांव के समग्र विकास पर जोर दिया जाता है न कि किसी एक उत्पादक क्षेत्र के विकास पर। इससे कृषि के साथ-साथ ग्रामीण उद्योग, हस्तशिल्प व किसी भी ऐसे व्यवसाय के विकास का पूर्ण प्रयास किया जाएगा जिसके विकास के लिए आवश्यक संसाधन गांव में उप-लब्ध हों। समन्वित ग्राम विकास योजना में ही लघु व सीमान्त कृषक विकास अभिकरण को सम्मिलित कर लिया गया है तथा लघु और सीमान्त कृषकों को पहले की भांति सुविधाएं दी जाती रहेंगी। छोटे और सीमान्त कृषक यदि खेती के साथ-साथ कोई ग्रामीण उद्योग स्थापित करना चाहें तो उसके लिए भी उन्हें अनुदानित शर्तों पर सहायता मिलेगी। इसमें छोटे और सीमान्त कृषकों के अतिरिक्त ग्रामीण दस्तकारों और अन्य कमजोर वर्ग के लोगों को गैर-कृषि कार्यों के विकास हेतु सहायता दी जाती है। कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण लघु और सीमान्त कृषकों तथा अन्य ग्रामीण गरीबों में कुशलता की कमी रहती है। इसलिए समन्वित ग्राम विकास योजना के अंतर्गत 'ट्राइसेम' योजना चलाई गयी है। 'ग्राम युवा स्वरोज-गार प्रशिक्षण कार्यक्रम' की राष्ट्रीय योजना के अंतर्गत ग्रामीण युवकों को अधिक निपुण बनाने तथा अधिक जोखिम वहन करने योग्य बनाने के लिये प्रशिक्षित किया जाता है, ताकि वे स्थानीय क्षेत्र में स्वरोजगार ढूंढने में समक्ष हो सकें। इस प्रशिक्षण योजना में प्रतिवर्ष प्रत्येक विकास खंड से 60 व्यक्तियों को प्रशिक्षित किया जाएगा। प्रशिक्षण के लिये 6 महीने की निर्धारित अवधि में प्रत्येक प्रशि-क्षार्थी को यदि वह उसी विकास खंड का निवासी है जिसमें उसे प्रशिक्षण दिया जाता है तो उसे 50 रुपये प्रति माह वजीफा और यदि वह विकास खंड से बाहर प्रशिक्षण पाता है तो उसे 100 रुपये प्रति माह वजीफा दिया जाता है। इस प्रकार का प्रयास निश्चित ही गांव के निर्धन वर्गों तथा लघु व सीमान्त कृषकों की स्थिति सुधारने में सक्षम होगा, क्योंकि इसमें खेती के साथ-साथ गांव के विकास की समस्त संभावनाओं का उपयोग किया जाएगा।

स्पेशल कम्पोनेंट प्लान :

यद्यपि समाज के सभी लघु व सीमान्त कृषक गरीबी और पिछड़ेपन का जीवन बिताते हैं तथापि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लघु व सीमान्त कृषकों और गरीब लोगों के लिए स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान चलाई जा रही है। यह योजना समन्वित ग्राम विकास योजना के तुल्य ही है जिसमें यह विचार है कि छठी पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत कम से कम 50 प्रतिशत हरिजन परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाया जाएगा। हरिजन वर्ग के सदस्यों को समानान्तर प्रतिभूति के अभाव में व्यापारिक बैंकों से ऋण नहीं मिल पाते। बैंक इन वर्गों के लोगों से ऋण की पुनर्अदायगी के प्रति अधिक आस्वस्त नहीं रहता है इसलिए स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान के अंतर्गत लघु कृषकों के ऋण पर 25 प्रतिशत का अनुदान और 25 प्रतिशत मार्जिन मनी की व्यवस्था सरकार की ओर से रहती

है । इसी प्रकार सीमान्त कृषकों के संदर्भ में $33\frac{1}{3}$ प्रतिशत का अनुदान और $16\frac{2}{3}$ प्रतिशत मार्जिन मनी की व्यवस्था रहती है । दोनों दशाओं में प्रदत्त ऋणों का 50 प्रतिशत भाग सहायता के रूप में कम होता है जिसके भुगतान के प्रति बैंक भी आश्वस्त रहते हैं । इससे विभिन्न व्यापारिक बैंक ऋण प्रदान करने में कठिनाई का अनुभव नहीं करते । ग्रामीण हरिजन परिवारों के लिए स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान बनाने का लक्ष्य यही रहा है कि आयोजनगत परिव्यय से जो विकास कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं उनसे हरिजन परिवारों को भी अपेक्षित लाभ मिल सके । इसमें हरिजन परिवारों को विशेष लाभ पहुंचाने के लिए विशेष धन राशि तथा आर्थिक स्थिति में सुधार के भौतिक लक्ष्य भी निर्धारित किए जाएंगे ।

ग्रामीण समाज के कमजोर वर्गों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए किए जाने वाले उपरोक्त प्रयास अवश्य ही स्वागत योग्य हैं । लघु और सीमान्त कृषकों की स्थिति सुधारने के ये अभिकरण उत्पादन, प्रविधि, भूमि स्वामित्व और प्रबन्ध की वर्तमान दशाओं में क्रियाशील होते हैं । वे इन किसानों को विभिन्न मौद्रिक और आगत संबंधी सुविधाएं देकर उनकी स्थिति सुधार का प्रयास करते हैं । इस कारण इन सभी प्रयासों को सूक्ष्मदर्शी दृष्टि के अंतर्गत रखा जा सकता है । यह प्रक्रिया आवश्यक है ही साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि इनकी स्थिति में सुधार के प्रति समष्टिदर्शी दृष्टि पर भी विशेष ध्यान दिया जाए । सामान्य उत्पादिता वृद्धि, भूमि सुधार, भूमि प्रबन्ध, ग्रामीण औद्योगिकी आदि के प्रति समुचित वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया जाए । इनके प्रति यद्यपि योजनाकाल में प्रयास किया गया परन्तु अभी बहुत कुछ सुधार की संभावना है । एक ओर सामान्य वातावरण में सुधार और दूसरी ओर विशिष्ट कार्यक्रमों द्वारा प्रत्यक्ष सहायता से उनकी स्थिति में सुधार की संभावना अधिक स्पष्ट हो जाती है ।

सुधारार्थ सुझाव :

खेतिहर संरचना के इन कमजोर वर्गों के विकास के लिए कोई उपाय सुझाने से पूर्व हमें यह निश्चित रूप से ध्यान में रखना है कि समाज में पूर्ण आर्थिक समानता स्थापित करना अत्यन्त कठिन है । परन्तु यह भी निर्विवाद है कि ग्रामीण समाज के इन कमजोर वर्गों और सम्पन्न किसानों के मध्य ज्यादा दूरी जो योजनाकाल में बढ़ गयी, कम की जा सकती है और कम की जानी चाहिए । छोटे और सीमान्त किसानों की हालत सुधारने के लिए दो प्रकार के प्रयासों पर विचार किया जा सकता है । प्रथम, आय और सम्पत्ति कम सम्पन्न वर्ग से कमजोर वर्गों की ओर हस्तांतरण और द्वितीय, खेतिहर संरचना के इन कमजोर वर्गों को उत्पादक बनाना । प्रथम युक्ति पर भी विभिन्न राजकोषीय नीतियों से प्रयास किया जा रहा है । परन्तु इसकी अपनी सीमा है क्योंकि समग्र रूप से ग्रामीण अर्थव्यवस्था गरीब है और आय हस्तांतरण के प्रति कठोर कदम उठाना वर्तमान परिस्थितियों में न तो संभव है और न वांछित ही । आय और संपत्ति के पुनर्वितरण पर तभी तक जोर दिया जा सकता है जब तक यह प्रथम वर्ग की उत्पादन क्षमता हतोत्साहित न करे । इस कारण दूसरी युक्ति पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि समाज के गरीब और कमजोर कृषक उत्पादक बन सकें । इसके लिए विभिन्न अभिकरणों से प्रत्यक्ष सहायता के साथ-साथ निम्निलिखित उपाय लाभदायक होंगे। :

भूमि सुधार :

भारत में भूमि सुधार कानूनों के अंतर्गत अब तक मुख्य जोर लगान उपजीवी मध्यस्थों का उन्मूलन, कास्तकारी सुधार और जोत सीमारोपण पर रहा है । भूमि सुधार कानूनों से यद्यपि कृषि क्षेत्र की सर्वाधिक गंभीर समस्या - मध्यस्थ प्रथा का उन्मूलन हो गया। वास्तवविक कास्तकार का सरकार से सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया । लेकिन इन कानूनों से समाज के एक विशेष वर्ग को ही लाभ हुआ । 'खुदकास्त' के नाम पर बड़ी-बड़ी जोत के स्वामी बनकर तत्कालीन लगान उपजीवी जमींदार आज के पूंजीपति किसान बन गए हैं । चकबन्दी कानून बड़े और माध्यम किसानों की आय और उत्पादिता बढ़ाने में विशेषकर सहायक हुआ है । बड़े किसान अपनी पूर्वत्ता सम्पन्न आर्थिक स्थिति और साख-सुविधाओं का लाभ उठाकर चकबन्दी की हुई जोत पर आधारित सुधार करने में सफल हुए हैं, अर्थात छोटे व सीमान्त कृषकों को विशेष लाभ नहीं मिल पा रहा है । कुछ आशा बंधती है जोत सीमाबन्दी कानूनों और उनके कार्यान्वयन से । परन्तु इसकी भी अपनी सीमा है क्योंकि यदि किसी परिवार को केवल खेती पर निर्भर रहकर अपना जीवनयापन करना है उसके लिए 2 हैक्टेयर से कम जोत अपर्याप्त होगी । यदि न्यूनतम स्तर 2 हैक्टेयर भी माना जाए तो भी समस्त खेतिहर परिवारों को दो हैक्टेयर भूमि नहीं प्रदान की जा सकती है । क्योंकि देश में कुल 14.22 करोड़ हैक्टेयर भूमि कृषि कार्यों के अंतर्गत है । 1971 की जनगणना के अनुसार उस वर्ष कुल 7.05 करोड़ भूमिवान कृषक थे । उपविभाजन और जनसंख्या वृद्धि के कारण अब तक इनकी संख्या निर्विवाद रूप से बढ़ गयी होगी । इससे यह प्रतीत होता है कि देश के सभी भूमिवान किसानों को 2 हैक्टेयर भूमि नहीं प्रदान की जा सकती है । भूमि सुधार कानूनों के अंतर्गत जोत सीमाबंदी की अपर्याप्तता का एक अन्य उदाहरण यह भी है कि विभिन्न राज्यों में जनसंख्या का घनत्व और भूमि का वितरण कुछ इस प्रकार है कि देश में घोषित कुल अतिरिक्त भूमि का लगभग 50 प्रतिशत भाग मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के बुन्देल-

खंड संभाग में केन्द्रित है। इन क्षेत्रों में भूमि की निजी उर्वरता के कारण भूमि की मांग अत्यन्त कम है। इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में भूमियां अधिक उर्वर है वहां जनसंख्या का घनत्व पूर्णतः इतना अधिक है कि वहां अतिरिक्त भूमि घोषित कर सकने की संभावना अत्यन्त कम है। ग्रामीण जनसंख्या में अपने वातावरण के प्रति अधिक लगाव होने के कारण यह संभावना भी अत्यन्त क्षीण है कि अधिक सघन बसे राज्यों से जनसंख्या का विचलन भूमि बहुल राज्यों की ओर कर सकेगा। परन्तु फिर भी समाजिक न्याय की दृष्टि से जोत सीमाबन्दी कानूनों का कड़ाई के साथ पालन किया जाना चाहिए। देश के विभिन्न राज्यों में इस समय जोत सीमाबन्दी कानूनों की सीमा जोत की उर्वरता और सिंचाई सुविधा के आधार पर 12 एकड़ से 60 एकड़ के मध्य निश्चित की गई है, जहां भूमि उर्वर और सिंचाई सुविधायुक्त है वहां जोत की सीमा नीची और असिंचित तथा बंजर भूमि वाले क्षेत्रों में जोत की सीमा ऊंची रखी गयी है। परन्तु जोत सीमा-बन्दी कानून के सघन कार्यान्वियन के अभाव में समुचित परिणाम नहीं मिल सके हैं। मसलन सम्प्रति जोत सीमा-बन्दी कानूनों के आधार पर देश में 46 लाख एकड़ भूमि अतिरिक्त घोषित की जा चुकी है-जिसमें केवल 25 लाख एकड़ भूमि सरकार के स्वामित्व में आ सकी है और उसमें से केवल 16 लाख एकड़ भूमि का ही वितरण किया जा सका है। जोत सीमाबन्दी कानूनों के सम्यक कार्यान्वियन से सीमान्त कृषकों और खेतिहर मजदूरों को कुछ भूमि मिल सकेगी जिससे उन्हें एक उत्पादक आधार मिल सकेगा।

उत्पादकता वृद्धि :

भूमि सुधार प्रयासों और जोत की सीमा-बन्दी से प्राप्त अतिरिक्त भूमि प्रथम तो वर्तमान और आगामी जनसंख्या के दृष्टिकोण से अपर्याप्त है और दूसरे इनके वितरण से निर्मित जोतें अन्ततः अत्यन्त छोटे आकार की होंगी और यदि उपज का वर्तमान स्तर आगामी वर्षों में भी बना रहा तो इन कृषकों की हालत में सुधार न हो सकेगा। इसलिए इनकी जोत पर उपज बढ़ाने का सक्षम उपाय अपरिहार्य है। यद्यपि योजना काल में विभिन्न फसलों की औसत उत्पादिता बढ़ी है उदाहरण के लिए गेहूं की प्रति हैक्टेयर औसत पैदावार 1949-50 में 6.5 क्विंटल थी जो 1978-79 में 15.7 क्विंटल हो गयी। इस अवधि में धान की प्रति हैक्टेयर पैदावार 7.7 क्विंटल से बढ़कर 13.4 क्विंटल, ज्वार की 3.8 क्विंटल से 7.2 क्विटल और बाजरे की 3.1 क्विटल से बढ़कर 4.9 क्विटल हो गयी। लेकिन अभी प्रति भूमि इकाई उत्पादन बढ़कर समग्र उत्पादन बढ़ाने की पर्याप्त संभावनाएं विद्यमान हैं, यद्यपि फसलों के अंतर्गत क्षेत्र बढ़ा उत्पादन बढ़ाने की संभावनाएं अब कम हैं। प्रदर्शन फार्मों के आंकड़ों और अंततः राष्ट्रीय क्षमता के आंकड़ों के अवलोकन से यह प्रतीत होता है कि सक्षम प्रसार सेवाओं और पर्याप्त व सामयिक कृषि निविष्टियों की पूर्ति द्वारा प्रति हैक्टेयर कृषि उत्पादन स्तर निश्चित ही दुगुने से अधिक किया जा सकता है और जिस दिन प्रति हैक्टेयर उत्पादन स्तर वर्तमान उत्पादन से दुगना हो जाएगा निश्चित ही 3 से 5 एकड़ तक ही जोत से एक औसत परिवार का समुचित भरण-पोषण किया जा सकता है और वे आत्मनिर्भर बन सकते हैं। भूमि की चरम उत्पादन क्षमता तो अभी बहुत अधिक है इस कारण आशान्वित होना स्वाभाविक है। उपरोक्त सारणी से यह प्रतीत होता है कि उत्पादिता का वर्तमान राष्ट्रीय औसत बढ़ाने के पर्याप्त अवसर विद्यमान है। परन्तु प्रदर्शन फार्मों के नजदीक पहुंचने के लिए आवश्यक है कि नियंत्रित सिंचाई सुविधा, संतुलित रासायनिक उर्वरक आदि कृषि निवेशों की सम्यक व्यवस्था की जाए। भारत में 14.22 करोड़ हैक्टेयर शुद्ध कृषित क्षेत्र से 130 मी० टन खाद्यान्नों का उत्पादन होता है जबकि चीन मात्र 11.2 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र से प्रतिवर्ष लगभग 300 मी० टन खाद्यान्नों का उत्पादन कर लेता है। तात्पर्य केवल यह है कि देश में उत्पादिता बढ़ाकर उत्पादन बढ़ाने की पर्याप्त संभावनाएं हैं, और छोटी जोतों को आधिक्य सृजित कर सकने वाली बनाया जा सकता है।

भूमि प्रबन्धन :

समुचित भूमि प्रबन्ध की उपयोगिता लघु और सीमान्त किसानों की स्थिति सुधारने में महत्वपूर्ण है। इस दिशा में मुख्यतः ये प्रयास करने होंगे। प्रथम यह कि समग्रता के आधार पर देश में कृषि योग्य बेकार पड़ी भूमियों को उत्पादक बनाया जाए और देश की ऊंची नीची भूमियों को समतल बनाकर फसल उत्पादन के योग्य बनाया जाए। सम्प्रति देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32.88 करोड़ हैक्टेयर में से 30.43 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र के भूमि उपयोगिता के आंकड़े उपलब्ध हैं। इसमें से गैर-कृषि कार्यों में प्रयुक्त होने वाली और ऊसर व कृषि के अयोग्य 3.95 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र है। समग्ररूप से वनों के अंतर्गत 6.64 करोड़ हैक्टेयर क्षत्र है। स्थाई चरागाह, पेड़ व बागों के अंतर्गत कुल 1.66 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र है। देश भर में कुल शुद्ध बोया जाने वाला क्षेत्र 14.22 करोड़ हैक्टेयर है। चालू परती और कृषि योग्य खाली भूमि 3.96 करोड़ हैक्टेयर है। इन आकड़ों से यह प्रतीत होता है कि सम्यक भूमि व्यवस्था द्वारा 3.96 करोड़ हैक्टेयर क्षेत्र विविध फसलों के अंतर्गत लाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त भूमि प्रबन्ध से सम्बद्ध दूसरी समस्या पानी के भराव, खारेपन और बाढ़ग्रस्त भूमियों की है। मंत्रालय द्वारा प्रसारित आंकड़ों के अनुसार देश की जमीन का एक बहुत बड़ा भाग भूमि क्षरण, पानी के भराव, खारेपन और बाढ़ से ग्रस्त है।

(शेष पृष्ठ 23 पर)

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

मासिक रिपोर्ट

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वित की पुनरीक्षा तथा 1983–84 की वार्षिक कार्रवाई योजनाओं के अनुमोदन करने के लिए कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और राजस्थान की राज्य स्तरीय समन्वय समितियों की बैठकें क्रमश: 24–11–83, 26–11–83 तथा 29–11–83 को हुई थी। इन बैठकों में मंत्रालय के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था।

सचिव (ग्रामीण विकास) ने 28–11–1983 को राजस्थान का दौरा किया था और उन्होंने समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन की पुनरीक्षा की थी।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा अन्य कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का अध्ययन करने के लिए जम्मू तथा काश्मीर में एक केन्द्रीय दल भेजा गया था। इस दल ने 24 नवम्बर से 29 नवम्बर, 1983 तक काश्मीर तथा जम्मू प्रभागों का दौरा किया था। इसकी रिपोर्ट को अन्तिम रूप दिया जा रहा है।

दुधारू पशुओं की बीमा सम्बन्धी समस्याओं पर विचार विमर्श करने के लिए सचिव (ग्रामीण विकास) की अध्यक्षता में 18–11–83 को एक अनुवर्ती बैठक हुई थी। इस बैठक में बीमा कम्पनियों, वित्त मंत्रालय के बैंकिंग तथा बीमा विभागों, योजना आयोग और राजस्थान राज्य सरकार के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। बीमा करने की गुंजाइश तथा बीमा सम्बन्धी दावों का निपटान करने के विशेष सन्दर्भ में कार्यान्वयन की समस्याओं पर विचार विमर्श किया गया था।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा सम्बद्ध योजनाओं के बारे में सातवीं पंचवर्षीय योजना के उप दल की पहली बैठक सचिव (ग्रामीण विकास) की अध्यक्षता में 30 नवम्बर, 1983 को हुई थी। इस बैठक में सातवीं योजना में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की नीति तथा परिव्यय के आकार के बारे में विचार विमर्श हुआ था। यह निर्णय लिया गया था कि सदस्य विचारार्थ-विषय के विभिन्न मुद्दों पर नोट प्रस्तुत करेंगे।

सचिव (ग्रामीण विकास) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के प्रभारी राज्य सचिवों के साथ विचार विमर्श कर रहे हैं। तमिलनाडु, महाराष्ट्र, जम्मू तथा काश्मीर और केरल की पुनरीक्षण बैठकें क्रमश: 29–11–83, 30–11–83 5–12–83 तथा 7–12–83 को हुई थी।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यक्षेत्र का समग्र रूप से मूल्यांकन किया गया है। मूल्यांकन से पता चलता है कि अक्तूबर, 1983 के अन्त तक कार्यक्रम के अन्तर्गत 9.70 लाख लाभभोगियों को शामिल किया गया था। इनमें 3.98 लाख लाभभोगी (अर्थात् 41 प्रतिशत) अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों से है। कुल 110.30 करोड़ रुपये की धनराशि को उपयोग में लाए जाने की सूचना मिली है। इसके अतिरिक्त, अक्तूबर, 1983 के अन्त तक 198.05 करोड़ रुपये का आवधिक ऋण वितरित किया गया है। (तथापि, यह सूचना अन्तिम है।)

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के कार्यान्वयन की पुनरीक्षा करने और ग्रामीण भूमिहीनों के लिए रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्यों-केन्द्र शासित क्षेत्रों से प्राप्त हुई परियोजनाओं पर विचार विमर्श करने के लिये केन्द्रीय समिति की एक बैठक हुई थी। 12 राज्यों तथा एक केन्द्र शासित क्षेत्र से 39 परियोजनाएं प्राप्त हुई थीं। समिति ने 23 परियोजनाएं अनुमोदित की थीं जिनके लिए 105.44 करोड़ रुपये का व्यय शामिल है।

समीक्षाधीन अवधि के दौरान राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए विभिन्न राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों को 265.94 लाख रुपये की धनराशि और 415 मीटरी टन खाद्यान्नों की मात्रा बंटित की गई है। इसके साथ ही, चालू वर्ष के दौरान मंजूर किए गए सहायक अनुदान की कुल धनराशि 10009.06 लाख रुपये हो गई है। इसके अतिरिक्त, चालू वर्ष में विभिन्न राज्यों/केन्द्र शासित क्षेत्रों को 1,18,263 मीटरी टन खाद्यान्नों की मात्रा बंटित की गई है।

ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण देने की योजना (ट्राइसेम)

अतिरिक्त सचिव (ग्रामीण विकास) की अध्यक्षता में 22–11–83 को यूरोपीय आर्थिक समुदाय मिशन के साथ विदेशी सहायता के कुछ प्रस्तावों पर विचार करने के लिए एक

बैठक हुई थी। यूरोपीय आर्थिक समुदाय मिशन ने राज्य केन्द्रों को सुदृढ़ बनाने की योजना को सहायता देने के लिए अपनी इच्छा दर्शायी।

राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान हैदराबाद द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम/गोष्ठियां/कार्यशालाएं

1 आर्थिक विकास तथा सामाजिक परिवर्तन पर सेमीनार

इस सेमिनार ने 32 व्यक्तियों अर्थात् आर्थिक विकास तथा सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करने वाले शिक्षाविद शोध कर्त्ताओं, राज्य सरकारों, राष्ट्रीयकृत बैंकों तथा स्वैच्छिक संगठनों की नीति निर्धारण तथा नीति संचालन से संबंधित वरिष्ठ प्रशासकों ने भाग लिया था।

2 जिला ग्रामीण विकास एजेन्सियों के क्षेत्रीय परियोजना अधिकारियों (उद्योग के लिए) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

इस पाठ्यक्रम में 10 व्यक्तियों ने भाग लिया था जिसमें पंजाब से, एक व्यक्ति गुजरात, महाराष्ट्र तथा तमिलनाडु से दो-दो व्यक्ति, और केरल से तीन व्यक्ति लिए गए थे।

3 ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं तथा बच्चों का विकास

इस पाठ्यक्रम को यूनीसेफ तथा आन्ध्र प्रदेश सरकार द्वारा संयुक्त रूप से प्रायोजित किया गया था। इस पाठ्यक्रम में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों की संख्या 15 थी जिनमें चुने हुए जिलों की जिला महिला तथा बाल कल्याण अधिकारी और आन्ध्र प्रदेश के प्रशिक्षण केन्द्रों तथा गृह विज्ञान प्रभागों की ग्राम विकास प्रशिक्षण अधिकारी शामिल थीं।

4 परियोजना का कार्यान्वयन, निगरानी तथा मूल्यांकन विकास

नगालैंड सरकार के अनुरोध पर राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र, गोहाटी द्वारा इस पाठ्यक्रम को आयोजित किया गया। विद्युत बोर्ड के अधिशासी अभियन्ताओं, नगालैंड के राज्य स्तरीय अधिकारियों सहित 57 व्यक्तियों ने इस कार्यक्रम में भाग लिया था।

5 ग्रामीण गरीबों के विकास के लिए नीति तथा कार्यक्रम

राज्य सरकारों, वाणिज्यिक बैंकों तथा स्वैच्छिक संगठनों के 14 व्यक्तियों ने इस पाठ्यक्रम में भाग लिया था।

कृषि विपणन

समीक्षाधीन अवधि के दौरान राज्य सरकारों को ग्रामीण गोदामों के निर्माण हेतु इस प्रयोजन के लिए ग्राह्य उपदान में केन्द्रीय सरकार के अंशदान के रूप में 11.087 लाख रुपये की धनराशि बंटित की गई है। चालू वर्ष के दौरान अब तक कुल 123.690 लाख रुपये की धनराशि बंटित की गई है।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

सचिव, ग्रामीण विकास मंत्रालय, को 8 से 14 नवम्बर, 1983 तक बैंकाक में हुए "एस्केप" की कृषि विकास से संबंधित समिति के पांचवें सत्र में भाग लेने के लिए नामित किया गया था।

इस मंत्रालय में संयुक्त सचिव श्री पी० एन० अब्बी, उत्तर प्रदेश सरकार के आयुक्त एवं सचिव (ग्रामीण विकास विभाग) श्री विश्वनाथ आनन्द तथा नगालैंड सरकार के कृषि उत्पादन आयुक्त तथा सचिव, (ग्रामीण विकास), श्री एल० कोल्ने को 15 से 26 नवम्बर, 1983 तक मनीला (फिलीपिन्स) में ग्रामीण विकास हेतु स्थानीय सरकार के योगदान के बारे में हुई गोष्ठी में भाग लेने हेतु नामित किया गया था।

इस मंत्रालय में निदेशक (आई० आर० डी०) श्री सी० एन० एस० नायर को 22 से 25 नवम्बर, 1983 तक कोलम्बो (श्रीलंका) में सहभागिता ग्रामीण विकास पर अन्तर्देशीय कार्रवाई अनुसन्धान के बारे में हुई 'एस्केप' की बैठक एवं अध्ययन दौरे में भाग लेने हेतु नामित किया गया था।

कृषि विपणन बोर्ड, दिल्ली प्रशासन के अध्यक्ष श्री वीरेन्द्र प्रकाश को एशिया तथा प्रशांतीय देशों के लिए खाद्य विपणन संस्थाओं की एसोसिएशन और खाद्य तथा कृषि संगठन द्वारा बागवी (फिलीपिन्स) में 28 नवम्बर से लेकर 9 दिसम्बर, 1983 तक आयोजित किए जा रहे फल तथा सब्जी विपणन सुधार के बारे में क्षेत्रीय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में भाग लेने हेतु नामित किया गया। □

गांव

गांव
अभाव ग्रस्त, तनाव ग्रस्त,
बाढ़ ग्रस्त, अकाल ग्रस्त,
इस गांव की
पगडंडी पर
इन ग्रामवासियों द्वारा
मरे हुए सांप को
पांव तले कुचलना
क्या काफी नहीं?

हेमन्त कुमार चावड़ा
सत्ती गुड़ी चौक, लक्ष्मी होटल,
रायगढ़ म० प्र०

गांव गांव में गोबर गैस

रमेशदत्त शर्मा

> गांव-गांव में गोबर गैस लगाने का यह अभियान पूरे देश में 20 सूत्री कार्यक्रम के अधीन चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए भारत सरकार के ऊर्जा मंत्रालय के अपरंपरागत ऊर्जा साधन विभाग ने एक राष्ट्रीय गोबर गैस परियोजना चलाई है।

हरियाणा के कुरुक्षेत्र जिले में एक गांव है सिहपुरा। इस गांव म आप जाएंगे तो आपको कंडों या उपलों से भरी ऊंची-ऊंची खत्तियां नहीं दिखाई देंगी। सिर पर गोबर का तसला उठाए या गोबर के कंडे पाथती हुई स्त्रियों के भी यहां दर्शन नहीं होंगे। चूल्हे में सिर दिए फूंकनी से आग फूंकती और कड़ुए धुंए के घूंट पीकर खांसती और आंखों से पानी गिराती गृहिणी भी इस गांव से गायब हो चुकी है। यह चमत्कार किया है गोबर गैस संयंत्रों ने जो सिहपुरा में घर-घर लग गए हैं। पिछले वर्ष 1982-83 में गोबर गैस को अपनाने में हरियाणा ने बाकी सभी राज्यों को पछाड़ दिया। यहां 2551 गोबर गैस संयंत्र लगाए गए जिनमें से 2259 चालू हो गए थे और 294 बन रहे थे। अकेले कुरुक्षेत्र जिले में 343 गोबर गैस संयंत्र लगाए गए हैं। हरियाणा राज्य का कृषि विभाग गांव में गोबर गैस संयंत्र बनाने के लिए सरकार की ओर से मिस्त्री भेजता है। एक गोबर गैस संयंत्र बनाने पर कुल खर्चा कोई 6 हजार रुपये के करीब बैठता है, जिसमें से सरकार 1940 रुपये सहायता के तौर पर देती है। जिसको जरूरत हो, उसे गोबर गैस संयंत्र बनाने के लिए बैंकों से कर्जे भी सुलभ कराए जाते हैं। जिन लोगों के पास इतने जानवर नहीं हैं कि उनका गोबर संयंत्र चलाने के लिए पूरा पड़े, उनके लिए सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र लगवाए जा रहे हैं। इस तरह का एक संयंत्र पचास परिवारों की ईंधन और रोशनी की जरूरत पूरी कर सकता है।

ऊर्जा के नए साधनों की खोज और विकास के लिए यह विभाग 6 सितम्बर 1982 को स्थापित किया गया था। उससे पहले यह काम अतिरिक्त ऊर्जा साधन आयोग किया करता था, जिसकी स्थापना 12 मार्च 1981 को की गई थी।

बायोगैस जिसे आमतौर पर गोबर गैस कहते हैं, की राष्ट्रीय परियोजना कृषि मंत्रालय में वर्ष 1981 के मध्य नवम्बर में बनाई गई थी। इस राष्ट्रीय परियोजना में पूरे देश में 4 लाख गोबर गैस संयंत्र लगाने का लक्ष्य रखा गया। इन संयंत्रों की लागत का एक हिस्सा सरकारी सहायता के रूप में उपलब्ध कराने के लिए 50 करोड़ रुपये की मंजूरी दी गई। पांचवी योजना में कृषि मंत्रालय 70 हजार गोबर गैस संयंत्र लगवाने में सफल हुआ था। इसी मंत्रालय ने छठी योजना के अंत तक दस लाख गोबर गैस संयंत्र लगाने का लक्ष्य निर्धारित किया था जिसे बाद में 4 लाख कर दिया गया। इस लक्ष्य की पूर्ति की जिम्मेदारी अपरंपरागत ऊर्जा साधन विभाग को सौंपी गई है। 1981-82 में 35 हजार गोबर गैस संयंत्र लगाने की योजना बनाई गई थी, लेकिन कुल 25,359 गोबर गैस संयंत्र ही स्थापित किए जा सके। लेकिन 1982-83 में 75 हजार गोबर गैस संयंत्र स्थापित करने का लक्ष्य लगभग पूरा कर लिया गया है। वर्ष 1983-84 में सवा लाख गोबर गैस संयंत्र बनाए जाएंगे और वर्ष 1984-85 में 1 लाख 65 हजार गोबर गैस संयंत्र लगाने की योजना है। इस तरह छठी योजना के अंत तक 4 लाख नए गोबर गैस संयंत्र लग जाएंगे। इससे पहले लगभग 1 लाख संयंत्र लग चुके हैं। इस तरह पूरे देश में कुल 5 लाख गोबर गैस संयंत्र होंगे।

लेकिन भारत की जनसंख्या को देखते हुए 5 लाख गोबर गैस संयंत्र बहुत कम हैं। चीन ने तो दस साल के अंदर ही अपने यहां 70 लाख गोबर गैस संयंत्र लगा लिए थे।

हिसाब लगाया गया है कि भारत में साढ़े सत्तावन करोड़ टन [गोबर हर

साल इकट्ठा किया जा सकता है। हालांकि यह भी कुल उपलब्ध गोबर का सिर्फ छियासठ प्रतिशत है। इस गोबर से जानते हैं कितनी गैस पैदा की जा सकेगी— 22 अरब 40 करोड़ घनमीटर। इतनी गैस उपलब्ध होने का मतलब है 140 लाख किलोलिटर मिट्टी के तेल की बचत। 1 किलोलिटर बराबर हुआ 1 हजार लिटर के। गोबर को गैस-बनाने के काम में लाने का दोहरा फायदा है। गैस तो ईंधन, रोशनी और लघु उद्योग चलाने के काम आएगी और उसके बाद जो पनीला गोबर बचा रहेगा उसे खाद के काम में लाया जा सकता है। इस तरह हम हर साल 20 करोड़ टन रासायनिक खाद की बचत कर सकते हैं। इसके साथ ही बचेंगे वे जंगल जो बड़ी तेजी से काट-काटकर चूल्हों में झोंके जा रहे हैं और चैन की सांस लेंगी वे ग्रामीण गृहणियां जिन्हें लकड़ी बटोरने के लिए मीलों तक दिन भर भटकना पड़ता है। गोबर गैस मिलने से उसे चूल्हा फूंकने की भी जरूरत नहीं रहेगी और उसकी रसोई ज्यादा साफ-सुथरी रह सकेगी। ईंधन के लिए पेड़ नहीं कटेंगे तो हरियाली बनी रहेगी और सब जानते हैं कि जहां हरियाली वहां खुशहाली। इस तरह गोबर गैस हमारी बहुत सी राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान कर सकती है।

हमारे देश के वैज्ञानिकों ने वर्ष 1930 के बाद के दशक में ही गोबर गैस के महत्व को पहचान लिया था। इस बारे में सबसे पहले भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीन पूसा इंस्टीट्यूट में अनुसंधान किया गया। उस समय यह पता लगाया गया कि मवेशियों के गोबर का विघटन होने पर जो गैस निकलती है, उन्हें जलाकर ईंधन का काम लिया जा सकता है। वर्ष 1946 में एक बेंच टाइप डाइजेस्टर विकसित किया गया, जिसे आधुनिक गोबर गैस संयंत्रों की बुनियाद माना जा सकता है। बंबई में दादर के मल-जल शोधन केन्द्र में भी गोबर और मल से गैस बनाने पर अनुसंधान किए गए थे। अब तक गोबर गैस संयंत्रों की छह डिजाइनें विकसित की जा चुकी हैं। इनमें 2 घन मीटर से 80 घन मीटर तक गैस हर रोज पैदा की जा सकती है।

सबसे ज्यादा गोबर गैस संयंत्र खादी ग्रामोद्योग आयोग द्वारा विकसित डिजाइन के लगाए गए हैं। इसके बाद नंबर आता है जनता गोबर गैस संयंत्रों का, जिनकी कम लागत वाली डिजाइन, इटावा उत्तर प्रदेश के गोबर गैस अनुसंधान केन्द्र ने तैयार की है। इन डिजाइनों में आगे सुधार के लिए बराबर अनुसंधान चल रहे हैं। एफ्प्रो यानी ऐक्शन फार फूड प्रोडक्शन संस्था की सहायता से दिल्ली के आई० आई० टी० ने गोबर गैस संयंत्र की ऐसी डिजाइन तैयार की है, जिसकी खाद में नाइट्रोजन ज्यादा होती है। रुड़की के केन्द्रीय भवन निर्माण संस्थान ने भी गोबर गैस संयंत्र की एक सुधरी डिजाइन तैयार की है। बंबई का आई० आई० टी० भी सुधरी डिजाइन का गोबर गैस संयंत्र बनाने में लगा है। लुधियाना में पंजाब कृषि विश्वविद्यालय ने "कचरा बायोगैस संयंत्र" बनाया है, जिसमें खेत खलिहान के कूड़े कर्कट से ही गैस बनाई जा सकती है। इस डिजाइन के संयंत्र प्रयोग के तौर पर लगाकर आगे आजमाया जा रहा है कि ठीक-ठीक चलते हैं कि नहीं। गैस बनाने का काम असल में कुछ जीवाणु की क्रिया से होता है। ये मुख्यतः मीथेन गैस बनाते हैं जो ज्वलनशील है। इन जीवाणुओं की क्रिया किन परिस्थितियों में ज्यादा तेज होती है और वे परिस्थितियां गोबर गैस संयंत्र में कैसे पैदा की जा सकती है, इस बारे में पूना की महाराष्ट्र एसोसिएशन फार कल्टीवेशन आफ साइंस में अनुसंधान चल रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने भी खेतीबाड़ी के कूड़े-कर्कट और कचरे से गैस बनाने पर महत्वपूर्ण अनुसंधान किए हैं। यहां तक कि जो जलकुंभी तालाबों और नदियों में भयानक खरपतवार के रूप में सारे देश में छा गई है, उसे भी अब गैस बनाने के काम में लाया जा सकता है। गोबर गैस ठीक से जले, इसके लिए बर्नर वगैरह की सुधरी डिजाइनें तैयार करने पर लखनऊ विश्वविद्यालय में अनुसंधान चल रहे हैं। जल्दी ही बाजार में बने-बनाए गोबर गैस संयंत्र मिलने लगेंगे, जिनको फैरोसीमेंट से बनाया जाएगा। खादी ग्रामोद्योग आयोग ने भी अपनी डिजाइन में स्टील की जगह फाइबर ग्लास लगाने के सफल प्रयोग किए हैं।

ये सभी अनुसंधान और प्रयोग राष्ट्रीय गोबर गैस परियोजना के अधीन चल रहे हैं। 1983–84 में इसके कार्यान्वयन के लिए 18 करोड़ रुपये रख गए हैं – इस अवधि में 100 सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र लगाए जाएंगे, जिनके लिए 5 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। पूरी छठी योजना में भी इतने ही सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र लगाने का लक्ष्य था, जिसे समय से पहले ही पूरा कर लिया जाएगा। गोरखपुर में एक ऐसा सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र बनाया जा रहा है, जिसमें गैस बनाने के लिए जलकुंभी खरपतवार का प्रयोग किया जाएगा। जलकुंभी के उपयोग से चलने वाले छोटे बायोगैस संयंत्र इस समय महाराष्ट्र में सांगली में और राजस्थान में भरतपुर में चल रहे हैं। पड़रौना उत्तर प्रदेश में हाल में ही मल-जल से गैस वाला संयंत्र चालू किया गया है।

पूरे देश में चार लाख गोबर गैस संयंत्रों के प्रस्तावित लक्ष्य की पूर्ति के लिए कुल 160 से 180 करोड़ रुपये

(शेष पृष्ठ 14 पर)

हमारे देश में कम से कम 20 लाख ग्रामीण परिवार ऐसे हैं जिनके पास इतने जानवर हैं कि हर परिवार अपने लिए एक गोबर गैस संयंत्र आराम से चला सकता है। जिन 80 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास गोबर की कमी है, उनके लिए बड़े-बड़े सामुदायिक गोबर गैस संयंत्र लगाए जा सकते हैं।

गांव की दहलीज पर नई सुबह

जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

भारत के गांवों का स्वरूप बदल रहा है। इसका श्रेय केवल ग्रामीण विकास कार्यक्रम की किसी एक योजना को नहीं दिया जा सकता। सारे देश में जो सर्वांगीण विकास होता है, उसका लाभ गांवों को मिलता है। यदि गेहूं चावल, तिलहन, दाल, कपास और पटसन के उत्पादन में वृद्धि होती है और उनके मूल्य अधिक लगते हैं तो उसका लाभ भारत के गांवों को प्राप्त होता है। किसान और खेती से लगे हुए मजदूर खुशहाल होते हैं, उनके बच्चे अच्छे कपड़े पहनते हैं, अधिक पुष्ट भोजन करते हैं, स्कूलों और कालेजों में पढ़ने जाते हैं और उनके घरों में रहन-सहन का स्तर आधुनिक मान्यताओं के हिसाब से बढ़ता ही है। इसलिए अगर साधारण तौर पर यही कह दिया जाए कि इस वर्ष या पिछले कुछ दिनों में कृषि के क्षेत्र में उन्नति हुई हैं तो उसी से अंदाज लगाया जा सकता है कि गांवों का हुलिया कुछ न कुछ बदला हुआ है। **जिस व्यक्ति ने आज से दस साल पहले किसी गांव को देखा है और जो आज देखता है उसे फर्क साफ मालूम होता है। हमारे गांव में पीने का पानी था तो बहुत बढ़िया पर, मिलता काफी नीचे था यानि साठ हाथ गहरे जाने पर पानी मिलता था। लम्बी डोर और शक्तिशाली बाजू ही उससे पानी भारी मात्रा में खींच सकते थे। अभी कुछ वर्ष हुए, जब मुझे गांव जाना पड़ा और मुझे देखकर आश्चर्य हुआ कि वहां पर लोग अब कुओं से पानी नहीं खींचते हैं, क्योंकि नल लगे गए हैं और नलों से पानी आ रहा है।**

यह ठीक है कि इस विकास से कुछ समस्याएं भी बढ़ी हैं। पहले गांव की गलियां साफ पड़ी होती थीं। अधिक से अधिक धूल होती थी। नल तो लग गए पर गांव सभाएं समुचित मात्रा में नालियां नहीं बना सकी और फलस्वरूप गलियों में धूल की जगह कहीं कीचड़ के दर्शन होने लगे हैं। फिर भी इस नये आयाम को गांव की जनता ने स्वीकार किया है और हमने देखा कि अनेक घरों में सैप्टिक टैंक के आधार पर शौचालय बन गए हैं और अब जो भी चाहे अपने घर में बिजली का पंखा चला सकता है। बिजली की रोशनी तो करता ही है और जो उद्योगशील है वह अन्य कामधंधों में भी इसका उपयोग करते हैं। उत्तर प्रदेश किसी जमाने में भारत की सभ्यता, संस्कृति और शान शौकत का केन्द्र रहा होगा जिसकी पुष्टि उसके ध्वसांवशेष, कुछ बची हुई शानदार इमारतें और लोकगाथा करती हैं। परन्तु आज उत्तर प्रदेश संस्कृत में सबसे ऊंची शिक्षा के केन्द्र काशी या मथुरा के लिए विख्यात नहीं है बल्कि इसलिए बदनाम है कि देश में सबसे अधिक निरक्षर वहां पर ही हैं। इस परिवेश में यह जानकर आश्चर्य होता है कि इस उत्तर प्रदेश में यह तय किया गया है कि 300 व्यक्तियों की आबादी की बस्तियों में एक प्राइमरी स्कूल और 800 की आबादी में एक मिडिल स्कूल उपलब्ध हो जिसके लिए पिछले वर्ष 533 प्राइमरी स्कूल और 152 मिडिल स्कूल खोले गए और इस वर्ष 402 प्राइमरी स्कूल और 130 मिडिल स्कूल हैं। इन स्कूलों में छात्रों को छात्रवृत्तियां मिलती हैं, पाठ्य पुस्तकें दी जाती हैं, बच्चों को पोशाकें दी गई हैं और इन से ऊपर 5600 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय हैं।

आज सारे देश में पहली से लेकर आठवीं तक की कक्षाओं में 10 करोड़ से अधिक छात्र शिक्षा पा रहे हैं और उन कारणों को दूर किया जा रह है जिस कारण लोग अपने बालकों को स्कूलों में पढ़ने नहीं भेजते।

सारे देश में साढ़े छः लाख स्कूल और कालेज हैं, 30 लाख अध्यापक पढ़ा रहे हैं और इस काम पर 30 अरब से भी अधिक रुपया व्यय हो रहा है। फिर भी यह कोशिश की जा रही है कि अगले पांच सालों में पहली से पांचवीं कक्षा तक के दो करोड़ और छात्रों को दाखिल किया जाए। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विकास के लिए राज्यों की योजनाओं में जो 80 अरब रुपये की संगठित योजनाएं रखी गई हैं, उसका सबसे बड़ा असर गांवों पर पड़ता है क्योंकि इन जातियों के लोग अधिकांशतः गांवों में पाए जाते हैं। अनुसूचित जनजातियों के लोग 19 राज्यों और संघ शासित प्रदेशों में रहते हैं और इनके 2,34,76,000 व्यक्तियों को जो लाभ पहुंचता है, वह ग्रामीण विकास में सहायक होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली पहुंचाने की दिशा में जो कार्यक्रम हुए उनके कारण यह कहा जा सकता है कि आज देश के लगभग आधे गांवों में बिजली पहुंच चुकी है। हमारे देश में 5.70 लाख से अधिक गांव हैं जिनमें ढाई लाख से अधिक गांवों में बिजली पहुंच चुकी है। अनेक राज्य ऐसे हैं जिनमें हरियाणा प्रमुख था जिन्होंने यह दावा किया है कि उनके प्रत्येक गांव में बिजली पहुंच चुकी है और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य में भी जहां के बारे में यह शिकायत होती रहती है कि उनके यहां बिजली का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में नहीं होता, मार्च, 1983 तक 1,12,561 गांवों में से 52,367 गांवों में बिजली पहुंच चुकी थी और हरिजन बस्तियों में 4,38,607 निजी नलकूपों या पम्पसेटों को बिजली प्रदान कर दी गई थी जो पीने के पानी के लिए ही नहीं बल्कि सिंचाई के लिए महत्वपूर्ण उपादान हैं। पिछले वर्ष में ही 4,969 गांवों में बिजली पहुंचाई गई और 23,664 निजी नलकूप या पम्पसैट लगाए गए और 1353 राजकीय नलकूप लगाए गए जबकि नहरी सिंचाई की योजना में उत्तर प्रदेश पहले से काफी आगे रहा है।

गांवों में बिजली आई सो आई, परम्परागत बिजली के स्थान पर ऊर्जा के नये स्रोतों के विकास ने भी क्रांति कर दी है और जिन गांवों में यह सुविधाएं नहीं हैं, उनकी मांग की जा रही है।

बायोगैस संयंत्र लोकप्रिय होते जा रहे हैं। इससे दो लाभ हैं बिजली मिलती हैं खाना बनाने की गैस उपलब्ध होती है और जिससे लकड़ी और कंडों से जलने वाले चूल्हों का स्थान गैस के चूल्हे ले रहे हैं और इस सबके साथ ही साथ जो गोबर इस गैस को बनाने में गलाया जाता है उसके स्थान पर कम्पोस्ट से भी बढ़िया खाद तैयार होता है और यह खाद बहुत उपजाऊ है तथा इसमें रासायनिक खाद के दुर्गुण नहीं हैं। गांवों के परिवेश में एक नई दिशा पवन चक्कियों की है। एक जमाना था जब इस तरह की चक्कियों से आटा पीसा जाता था और इसलिए आटा पीसने वाली चक्की का नाम पवन चक्की था। परन्तु आज पवनचक्की भूमिगत जल को निकाल कर सिंचाई के काम में आने लगी है। सौर ऊर्जा की इस देश में बहुत गुंजाइश है और जब इसका समुचित विकास होगा तो उसका लाभ भी हमारे गांवों को होगा चाहे वह सोलर पम्पों के रूप में हो या सोलर चूल्हों के रूप में। ग्रामीण विद्युती उद्योगीकरण के लिए वैकल्पिक ऊर्जा के सधन और सामाजिक वानिकी बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्ध होने वाले हैं और ग्रामों में आने वाली स्थिति का संकेत देते हैं।

20 सूत्री कार्यक्रम में ग्रामीण विकास के कार्य को और भी त्वरित कर दिया है। इनमें अधिकतर कार्यक्रम ग्रामीण विकास से संबंधित हैं। बीस में से मुश्किल से पांच कार्यक्रम ऐसे होंगे जिनका सीधा संबंध गांवों से न हो। वरना सिंचाई क्षमता की वृद्धि, बारानी खेती, दालों और तिलहन का उत्पादन, संबंधित तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, कृषि भूमि की हदबन्दी, खेतिहर मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी, बन्धुआ मजदूरों का पुनर्वास, अनुसूचित जातियों और जनजातियों की भलाई के कार्यक्रम, पीने के पानी की कमी वाले क्षेत्रों में सभी गांवों में पानी उपलब्ध कराना, गांवों में जिन परिवारों के मकान नहीं हैं, उन्हें मकान के लिए जमीन और मकान बनाने के लिए वित्तीय सहायता देना, बिजली का उत्पादन बढ़ाकर सभी गांवों में बिजली पहुंचाना, पेड़ लगाना, सामाजिक वानिकी और गोबर गैस तथा वैकल्पिक ऊर्जा के साधन बढ़ाना, परिवार नियोजन, सामान्य प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार, महिलाओं और बच्चों के कल्याण कार्यक्रम, आदिवासी और पिछड़े इलाकों में रहने वालों के लिए पौष्टिक आहार, 6 से 14 वर्ष की उम्र के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा आदि ऐसे कार्यक्रम हैं जो सीधे ग्रामीण विकास और ग्रामीण जनता की उन्नति के लिए बनाए गए हैं और इन्हें बड़ी तेजी के साथ कार्यान्वित ही नहीं किया जा रहा है, बल्कि प्रत्येक राज्य इस बात की कोशिश में लगा है कि वह यह दिखा सके कि उसने इस सम्बन्ध में कितना काम किया है। 1982–83 की सिंचाई क्षमता में वृद्धि के लिए 23,45,000 हैक्टेयर भूमि का लक्ष्य रखा गया था और यह लक्ष्य रखा गया है कि ग्रामीण विकास के एकीकृत कार्यक्रम से 31,38,000 परिवारों को लाभ पहुंचाया जाए जिससे वह अपना रोजगार कर सकें और राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम में 38 करोड़ एक लाख मानव दिवसों का रोजगार दिया जाए। यह मात्र लक्ष्य ही नहीं है, इनकी उपलब्धि भी हो रही है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के द्वारा 1982–83 में 34 करोड़ 99 लाख मानव दिवसों का रोजगार उपलब्ध कराया गया और समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 33,65,000 परिवारों की आर्थिक सहायता की गयी। इनके अतिरिक्त 10 लाख व्यक्तियों को अपना रोजगार खड़ा करने के लिए ट्राइसेम स्कीम में प्रशिक्षित किया गया जिनमें से 65 हजार व्यक्तियों ने अपने रोजगार खड़े कर लिए ह।

आदिवासियों के क्षेत्र में आठ लाख से अधिक परिवारों को गरीबी की सीमा की रेखा से ऊपर उठाने के लिए सहायता दी गई। अनुसूचित जनजाति के परिवार जो 1982–83 में गरीबी की रेखा को पार कर सके, उनमें 3,36,000 महाराष्ट्र के और 75,822 पश्चिम बंगाल के थे, बिहार के 56,111 गुजरात के 49,220 और उड़ीसा के 43,680 तथा मध्य प्रदेश के 32,281 थे। अकेले उत्तर प्रदेश का ही दावा है कि प्रदेश के 5,55,000 परिवार एकीकृत ग्राम विकास योजना से लाभान्वित हुए जिनमें 2,37,000 परिवार अनुसूचित जन जाति के थे। गत वर्ष 5679 समस्याग्रस्त गांवों में पीने के लिए पानी की व्यवस्था की गई। 10 से पचास राजकीय नलकूप लगाए गए तथा लगभग 11 लाख हैक्टेयर अधिकृत भूमि पर सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई गई। तीन लाख 713 हरिजन बस्तियों का विद्युतीकरण हुआ और 4,969 गांवों में इस वर्ष के अन्दर बिजली पहुंचाई गई। पौष्टिक आहार कार्यक्रम में 84,200 बच्चों को ग्राम विकास योजना के अन्तर्गत और 1,14,800 बच्चों को शिक्षा विभाग द्वारा पौष्टिक आहार उपलब्ध कराया गया।

विकास के सभी क्षेत्रों में जो भी उन्नति होती है उसका बड़ा भाग ग्रामों को प्राप्त होता है। बांध बने, नहरें बनीं, सड़कें बनीं, बिजली का उत्पादन हो और बिजली की लाइनें डाली जाएं, आज भारत के गांवों इनके लिए केवल तमाशबीन नहीं रहे हैं, बल्कि वह इनका पूरा-पूरा लाभ उठा रहे हैं। पिछले वर्ष देश में 57,500 बायोगैस संयंत्र लगे थे जिन पर लगभग 14 करोड़ रुपया व्यय हुआ था। यह गांव में ही थे और अब तो गांवों की उस जनता के लिए भी जिनके अपने बायोगैस संयंत्र नहीं हैं, सामूहिक बायो गैस संयंत्र बनाए जा रहे हैं। पिछले वर्ष सारे देश में 22607 गांवों में बिजली पहुंचाई गई और 3,19,090 पम्पसेटों को बिजली द्वारा चालित किया गया। सामाजिक वानिकी के क्षेत्र में भी प्रगति हुई और 3,76,000 हैक्टेयर भूमि पर जो पेड़ लगाएं गए, वे ग्रामीण ईंधन की समस्या को तो हल करेंगे ही, वृक्षारोपण द्वारा ग्रामों का स्वरूप संवर जाएगा और भूरक्षण भी होगा जिसका परिणाम लाभदायक फसल और सुहावना मौसम होगा।

यह तो रही बीस सूत्री कार्यक्रम की बात। लेकिन और भी ऐसे कार्यक्रम हैं जिन्होंने गांवों का हुलिया बदल दिया है। **एक समय था जब गांव वाले को खेती के लिए बीज खरीदते समय या अन्य खर्चे के लिए महाजन के पास जाना पड़ता था और किसान का जीवन ब्याज पर ब्याज देते ही बीत जाता था। वह कितना ही दे, उसका ऋण समाप्त नहीं होता था। आज देश में ग्रामीण बैंकों की स्थापना हो**

ई है और किसान को खेती करने के लिए, पशु पालन व पम्प सेट खरीदने के लिए, बैल खरीदने के लिए, ट्रैक्टर या थ्रेशर खरीदने के लिए, सस्ती ब्याज की दर पर ऋण मिलता है और हर बार यह कोशिश होती है कि बैंकों का पैसा अधिक से अधिक ग्रामों में लगे। अब तो यह कहा जाने लगा है कि देश में बैंक जो ऋण देते हैं, उसका अधिकांश भाग ग्रामों में जाता है। वैसे तो 1982–83 की वार्षिक योजना में बीस सूत्री कार्यक्रम के लिए ही 8374 करोड़ रु० का प्रावधान किया गया था और यह आशा की गई थी कि हमारे राष्ट्रीयकृत बैंक तथा अन्य वित्तीय संगठन इसको कार्यान्वित करने में अपना योगदान देंगे। जो कुछ भी कार्य हुआ है, उसमें इस प्रकार की सहायता का बड़ा भारी योगदान रहा है। वैसे ग्रामीण जीवन का कोई ऐसा पहलू नहीं है, जिस पर ध्यान न दिया गया हो। ग्रामों की भू समस्या को हल करने के लिए जोत की हदबन्दी जैसे भूमि सुधार किए गए। आशा यह की गई थी कि इस प्रकार जो अधिक भूमि उपलब्ध होगी, वह भूमिहीन, किसानों को बांट दी जायेगी। लेकिन इसके परिपालन में मुकदमेबाजियां आ गईं। अब यह निर्णय लिया गया है कि संविधान के संशोधन के द्वारा इस प्रकार के भूमि सुधारों को अदालत की पहुंच से बाहर कर दिया जाए और जब परिश्रमी व्यक्तियों के पास भूमि आएगी तो वह जिस मनोयोग के साथ अपने खेत की उपज बढ़ायेंगे, वह अभूतपूर्व होगी। उन्हें यदि वित्तीय सहायता की जरूरत होगी तो इन बैंकों से उपलब्ध कराया जाएगा। जो और सुविधाएं बढ़ी हैं उनमें डाकघरों और तारघरों के खोलने की व्यवस्था भी है। ग्रामीण क्षेत्रों में डाकखानों की संख्या बहुत बढ़ गयी है। सन 1947 में केवल 18,121 गांवों में डाकघर थे, मार्च, 1983 में 1,27,122 गांवों में यह सुविधा उपलब्ध थी। इनमें काम करने वाले कर्मचारियों के वेतन और काम की शर्तों में भी उन्नति हुई। ग्राम उद्योग और ग्राम शिल्प को बढ़ावा मिला है। कुछ क्षेत्र केवल हथकरघा उद्योग के लिए सीमित कर दिए गए और आज भारत का इस प्रकार का बना वस्त्र विदेशों में निर्यात होता है। इससे भी ग्रामीण जीवन सम्पन्न हुआ है। फिर भी भारत बड़ा देश है जहां जनसंख्या बढ़ती रहती है, यही कारण है कि जितनी भी प्रगति की जाती है, उसका जो परिणाम सामने दिखना चाहिए था वैसा नहीं है। पर आज के गांव आज से बीस वर्ष पहले के गांव से भिन्न हैं, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

गांव-गांव में गोबर गैस

(पृष्ठ 11 का शेषांश)

खर्च होंगे। राज्य सरकारों को राष्ट्रीय गोबर गैस परियोजना के अधीन से खर्च का पौने चौबीस प्रतिशत सहायता के तौर पर देने के लिए उपलब्ध कराया जाता है। राज्य सरकारों के अलावा, कृषि विश्वविद्यालय, स्वयंसेवी संस्थाएं, निजी संस्थाएं और बैंक भी इस कार्यक्रम में बढ़ चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं। इस कार्य में खादी ग्रामोद्योग आयोग सबसे आगे है जिसने 30 प्रतिशत गोबर गैस संयंत्र बनाने का जिम्मा लिया है।

गांव में गोबर गैस संयंत्र बना देने से ही समस्या हल नहीं हो जाती। ये संयंत्र लगातार चलते रहें और खराब होने पर वहीं उनकी मरम्मत की जा सके, यह बड़ा जरूरी है। पिछले दिनों भारतीय विज्ञान संवर्धन संस्था ने बुलंदशहर के जैनपुर, बिलसूरी, छपरावत और बुरावल गांवों में लगे गोबर गैस संयंत्रों का सर्वेक्षण किया तो पाया कि बहुत से संयंत्र खराब पड़े थे।

इसीलिए राष्ट्रीय गोबर गैस परियोजना में यह प्रावधान रखा गया है कि गांव में कम से कम एक आदमी ऐसा हो, जो जरूरत पड़ने पर गोबर गैस संयंत्र की मरम्मत कर सके। 1983–84 में गोबर गैस संयंत्र बनाने और उनकी मरम्मत करने का प्रशिक्षण देने के लिए 27 लाख रुपये खर्च करके देश भर में डेढ़ सौ प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाएंगे। क्योंकि 75 हजार में से 25 हजार संयंत्र खादी ग्रामोद्योग आयोग बनवाएगा, इसलिए एक तिहाई प्रशिक्षण कार्यक्रमों का भी भार उसी को सौंपा गया है। एक कार्यक्रम के लिए अधिक से अधिक 18 हजार रुपये का अनुदान दिया जाएगा। जो लोग प्रशिक्षण लेंगे, उन्हें 30 रुपये प्रतिदिन भत्ता मिलेगा और कम से कम पूरी तरह चालू गोबर गैस संयंत्र बनाकर सीखेंगे। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम की अवधि अधिक से अधिक 21 दिन की होगी।

गोबर गैस कार्यक्रम में महिलाएं सबसे अधिक दिलचस्पी ले रही हैं इसलिए ग्रामीण महिलाओं को गोबर गैस के इस्तेमाल और रख-रखाव के बारे में जानकारी देने के लिए पौने चार लाख रुपये की लागत से 500 पाठ्यक्रम चलाए जाएंगे। एक कोर्स पर अधिक से अधिक 750 रुपये खर्च किए जा सकेंगे। गांव में संयंत्र की देखभाल की जिम्मेदारी जो भी ग्राम-सेवक, पाठशाला अध्यापक या पंचायत सेवक उठाएगा, उसे प्रति संयंत्र 30 रुपये दिए जाएंगे। प्रशिक्षण देने वाले लोगों को प्रशिक्षण देने के लिए 1983–84 में 3 लाख 6 हजार रुपये की लागत से 30 कोर्स चलाए जाएंगे। पिछले दो सालों में लगभग दो हजार मिस्त्रियों को गोबर गैस संयंत्र बनाना सिखाया जा चुका है। इसके साथ ही 150 प्रशिक्षक तैयार किए जा चुके हैं। इन तमाम तैयारियों को देखते हुए कोई कारण नजर नहीं आता कि गोबर गैस परियोजना के लक्ष्य पूरे न हों।

देहातों में अब एक नई हवा चल पड़ी है लोग अपनी बेटी उसी घर में ब्याह रहे हैं, जिसमें गोबर गैस इस्तेमाल होती हो।

बी-38, कृषि विहार
नई दिल्ली-110048

यह भी अब आसान है

भोजन, खाद और रोशनी साथ-साथ

राम अधीर

कृषि प्रधान देश भारत में किसानों के लिए इस युग में खाद और ऊर्जा की आवश्यकता सर्वोपरि है। किन्तु, इस सत्य से नकारा नहीं जा सकता कि विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद भारत में अभी भी बहुत उपयोगी ऊर्जा का संकट मौजूद है। देश के अनेक अनुसन्धानपरक संस्थान इस दिशा में प्रयासरत हैं कि ऊर्जा के संकट से राहत मिले। केन्द्रीय कृषि अनुसन्धान परिषद् के तहत भोपाल के केन्द्रीय कृषि इन्जीनियरिंग संस्थान द्वारा अपने वैज्ञानिकों के माध्यम से इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किए जा रहे हैं। इस संस्थान ने ऊर्जा के स्रोत खोलने की दिशा में जो कार्य किया है, उससे सामान्यजन, खास तौर पर किसानों और ग्रामीणों को परिचित कराने की दृष्टि से इसका नाम एनर्जी-एन्क्लेण्ट (ऊर्जा-क्षेत्र) रखा है।

इस संस्थान के भोपाल नगर के नबी बाग में ऊर्जा के तरह-तरह के स्रोतों की खोज जारी है – संस्थान के एक वैज्ञानिक डा० माहेश्वरी तथा अन्यों ने सोलर-पम्प का ईजाद किया है। यह सोलर पम्प सूर्यताप लेकर बिजली पैदा करता है। इसकी वर्तमान लागत 35 हजार रु०. आती है, किन्तु 5–6 वर्ष बाद इसे 6–7 हजार रु० में तैयार किया जा सकेगा। इस सोलर पम्प के उपलब्ध हो जाने पर कुओं पर लगाए जाने वाले पम्प के लिए न तो डीजल की जरूरत होगी न बाहरी बिजली की। किसान डीजल और बिजली के खर्च से बच जाएंगे।

अपने ऊर्जा-अनुसंधान के कार्यों में संस्थान के वैज्ञानिकों ने गोबर गैस प्लांट (जनता बायो गैस) का भी निर्माण किया है। इस संयन्त्र को किसान अपने खेत या बाड़ी में निर्मित कर सकेगा। इस बायो-गैस से उसे खाद भी मिलेगी और वह खाना भी बना सकेगा और इस संयन्त्र पर उसे एक ही बार में मात्र 4 हजार रु० खर्च करने होंगे। इस गोबर गैस संयन्त्र से लोगों को गांव में रोशनी भी मिलेगी। सीमेंट से पक्का और स्थाई गोबर गैस संयन्त्र तैयार कर लेने पर यह सदैव उपयोगी होगा। इस संयन्त्र की विशेषता यह है कि इसकी एक ओर से गैस निकलती है और दूसरी ओर से खाद।

सोलर कुकर भी इस संस्थान की एक उपलब्धि है। इसके निर्माण पर केवल ढाई से तीन सौ रुपये व्यय आता है। गर्मी के दिनों में मात्र एक घण्टे में खाना तैयार हो जाता है। वर्तमान में यह उपयोगी चूल्हा केवल रोटी बनाने के लिए उपयोगी नहीं है। भोजन में चावल, दाल और सब्जी आसानी से बनाए जा सकते हैं। और यह सामग्री बनने तक देखरेख की भी जरूरत नहीं होती। शीतकाल में इस पर पानी गर्म किया जा सकता है।

इस संस्थान ने किसानों और ग्रामीणों के लिए जिस विकसित चूल्हे की खोज की है, वह भी उल्लेखनीय है। मिट्टी से निर्मित इस चूल्हे पर दो-तीन खाद्य पदार्थ आसानी से बन सकते हैं। चूल्हे के साथ जो पाईप लगाया गया है, वह पानी गर्म करने के लिए उपयोगी है। पाईप में ही नल लगाया गया है जिससे आवश्यकतानुसार पानी निकाला जा सकता है। इस चूल्हे की अधिकतम लागत एक सौ रु० बैठती है।

ईंधन और ऊर्जा का संकट भारत के शत-प्रतिशत गांवों में है। ऐसी स्थिति में ईंधन और खाद को साथ-साथ प्राप्त करने के लिए गोबर गैस संयन्त्र एक उपलब्धि है। गांधीजी के सेवा ग्राम में मैंने स्वयं ऐसा गोबर गैस संयन्त्र देखा है। यह संयन्त्र भोजन, खाद और ऊर्जा साथ-साथ देता है।

खादी ग्रामोद्योग आयोग, खादी ग्रामोद्योग परिषद और म० प्र० कृषि विभाग द्वारा गोबर गैस संयन्त्रों की स्थापना की गई है। वर्तमान में चार प्रकार की क्षमता वाले गोबर गैस संयन्त्र तो आसानी से तैयार किए जा सकते हैं। इनके प्रकार हैं :—2 घन मीटर (70 घनफुट); 3 घन मीटर (105 घन फुट) 4 घन मीटर (140 घन फुट) और 6 घन मीटर (210 घन फुट)। वर्तमान में इन पर 34 सौ, 42 सौ, 57 सौ और 63 सौ रु० व्यय आता है। खादी ग्रामोद्योग के अनुसार गांवों में लोहे के ड्रम से युक्त संयन्त्र अधिक उपयोगी होते हैं। किन्तु इनके रख-रखाव और सफाई पर ध्यान देना जरूरी है।

गोबर गैस संयन्त्र के लिए यह भी जरूरी नहीं है कि उसमें केवल गोबर ही डाली जाए। उसमें पशुओं का मल-मूत्र भी डाला जा सकता है। यह सामग्री संयन्त्र में जाकर खाद भी देती है और ईंधन भी। उत्तेजन टंकी इस संयन्त्र के लिए प्रमुख उपकरण है। जो ईंटों और सीमेंट से बनाया जा सकता है। यह संयन्त्र गांव के उस किसान के लिए उपयोगी है जो केवल दो जानवरों का मालिक हो। क्योंकि मध्यम आकार की एक गाय, भैंस या बैल से औसतन 10 किलो गोबर तो मिल ही जाता है तथा इस संयन्त्र के लिए इतना गोबर पर्याप्त है। □

108/1 शिवाजी नगर,
भोपाल-462016

सींगों को तराशने वाले ये खूबसूरत हाथ

—विमला रस्तोगी—

एक कलाकार के हाथों में कमाल का फन होता है। हुनर भरी उसकी उंगलियां निर्जीव को तराशकर अत्यंत खूबसूरत बना देती हैं। इसका सजीव उदाहरण है गाय-भैंसों के बेडौल बदसूरत सींगों को खूबसूरत, उपयोगी व दिलकश बना देने की कला। सींगों से बने तरह-तरह के सुन्दर शो-पीस (छोटे-बड़े सभी आकार में) ऐशट्रे, चाबी के गुच्छे, हाथों के कड़े और पेन्डेन्ट हमारी उत्सुकता को बढ़ाते हैं। बेडौल सींग का इतना सुन्दर रूप! ये कैसे बनते हैं? कहां बनते हैं? कितने लोग इस कार्य में लगे हैं? यह उद्योग कब आरम्भ हुआ? इस हस्तकला का भविष्य क्या है? इस कला में लगे कारीगरों की समस्याएं क्या हैं? यह सब जानने के लिए मैं सरायतरीन गई। सरायतरीन जिला मुरादाबाद की तहसील सम्भल से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर है तथा सींग से बनी वस्तुओं का गढ़ है। सरायतरीन में घुसते ही सींगों की दुर्गन्ध ने हमारा स्वागत किया। बाजार, गली, मोहल्ले या कह सकते हैं लगभग प्रत्येक घर म सींग तराशते कलाकार कारीगर दिखाई दिए। जगह-जगह पड़े सींग के ढेर, बुरादा, बोरी व टाट के टुकड़े बिछाए अपने काम में लगन से लगे कारीगर। उनकी व्यथा-कथा कह रहा था स्वयं उनका हुलिया। एकाएक मेरी आंखों में घूम गया एक दूसरा ही दृश्य। बड़े शहरों में एम्पोरियम तथा हैन्डीक्राफ्ट की दूकानों से सींग के कड़े, पेन्डेन्ट तथा चाबी के गुच्छे खरीदतीं स्वदेशी-विदेशी खूबसूरत महिलाएं तथा धनी परिवारों के ड्राइंग रूम को सजाते सींग के शोपीस। कारीगरों के हाथों की खटखट मुझे पुनः वर्तमान में ले आई।

सींग के उद्योग के दो ही गढ़ हैं—सरायतरीन तथा त्रिवेन्द्रम। लेकिन त्रिवेन्द्रम में आभूषण व कंघियां नहीं बनतीं और वहां इतने अधिक व्यक्ति भी इस काम में नहीं लगे हैं। अतः सरायतरीन को सींग के उद्योग का एक मात्र गढ़ कहना अतिश्योक्ति न होगी।

"एक वृद्ध कारीगर, जिसे सब खां साहब कहकर पुकारते हैं, से मैंने बात की। उनके अनुसार 1956 में सरकार ने सरायतरीन में एक प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया। उसके शिक्षक त्रिवेन्द्रम से यह कला सीखकर आए थे। उन्होंने शुरू में सरायतरीन के चार-छः मुसलमान लड़कों को सींग का काम सिखाया (सरायतरीन में लगभग 80 प्रतिशत मुसलमान हैं और केवल मुसलमान भाई ही सींग के लघु उद्योग में कार्यरत हैं)। किन्तु उस समय लोगों में सीखने का जोशोखरोश नहीं था। उस केन्द्र को जब कोई सफलता हासिल नहीं हुई तो अन्त में सरकार ने इसे बन्द कर दिया। लेकिन स्थानीय व्यापारी जेड० ए० खान के दिमाग में एक योजना आई। उन्होंने तत्काल अपनी योजना को क्रियान्वित किया और प्रशिक्षण प्राप्त 6–7 लड़कों को लेकर सींगों का काम शुरू किया तथा 1960 में जेड० ए० खान एण्ड संस के नाम से रजिस्ट्रेशन भी करा लिया। उनका काम चल निकला, और उनके यहां काम करने वाले कारीगरों की संख्या भी बढ़ गई। उनकी देखादेखी अन्य लोग भी इस तरफ आकर्षित हुए और आज स्थिति यह है कि सरायतरीन के लगभग 75 प्रतिशत मुसलमान सींग उद्योग में ही लगे हुए हैं। सरायतरीन औद्योगिक क्षेत्र नहीं है अतः रोजी-रोटी को तलाशती निगाहें सींग तराशने लगती हैं, फिर बचपन से ही अपने घर में या आसपास हर तरफ सींग का काम ही दिखाई देता है जिस ओर वे आकर्षित हो जाते हैं।

सींग की वस्तुएं बनाने के लिए पहले सींग को काट कर खोखल निकाल देते हैं। फिर आग में गर्म कर प्रेस मशीन में दबाकर सीधा करते हैं तत्पश्चात उस पर डिजाइन बनाते हैं। पतली आरी से कटिंग करते हैं और ग्राइंडर से चिकना करते हैं। पहले साधनों के अभाव में ये सारे काम हाथ से ही होते थे। लेकिन अब छोटी-मोटी मशीनों से काम लेते हैं। छिणी से छीलकर फालतू सींग निकाल देते हैं और रेगमार से चिकना करते हैं। अंत में जब वस्तु बन कर तैयार हो जाती है तो उस पर पालिश किया जाता है। सींग मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं—काले व सफेद। सफेद सींग कम मिलता है तथा मंहगा भी होता है पर सफेद सींग का बना सामान बहुत सुन्दर लगता है। हमारे यहां सफेद सींग पसन्द किये जाते हैं जबकि विदेशों में काले सींग का बना सामान ज्यादा लोकप्रिय है। कारीगर नए-नए डिजाइन खोजते रहते हैं, जिससे वस्तुओं की मांग बराबर बनी रहती है।

तरह-तरह के पशु-पक्षी, हाथी, घोड़ा, शेर, बाज, तोता, मोर, बेंत, टेबिल लैम्प, छड़ी, रूल, ऐशट्रे, आभूषण, (कड़े, अंगूठी, पेन्डेन्ट, नेकलेस, आदि) चाबी के गुच्छे तथा छोटी-छोटी सुन्दर सन्दूकचियां बनाने वाले, बालक, वृद्ध, जवान हुनर के धनी

इन कारीगरों की परेशानियां व शिकायतें कम नहीं हैं, क्योंकि सींग हैदराबाद से आता है। सरायतरीन के स्टौकिस्ट सींग खरीदते हैं फिर उन्हीं से अन्य लोग लेते हैं। पहले सींग 50 से 55 रु० क्विटल मिल जाता था। 1973 तक 80 से 200 रु० क्विटल तक मिल जाता था। लेकिन अब 300 से 350 रु० क्विटल तक मिलता है। "सींग की इतनी मंहगाई क्यों?" पूछने पर खां साहब ने बताया, "कि अब कच्चे माल का निर्यात होने लगा है। पहले हम 15 पैसे इंच

सींग बेचकर (सींग के खिलौने, शोपीस आदि इंच के हिसाब से बिकते हैं) 20 प्रतिशत मुनाफा कमाते थे अब 30 पैसे इंच बेचकर भी 5 प्रतिशत ही मुनाफा मिलता है। 1960 से अब तक इतनी मेहनत के बाद हम वहीं के वहीं हैं। केवल बच्चों की दाल रोटी मयस्सर कर पाते हैं। हमारे कारीगर 8 या 10 घण्टे जी-तोड़ मेहनत करते हैं किन्तु चाहकर भी उन्हें हम 10–15 रु० रोज से अधिक नहीं दे पाते। ऊपर से मुसीबत यह कि हमें सेलटैक्स भी देना पड़ता है। एक सेलटैक्स ऑफिसर ने यहां आकर सर्वेक्षण किया और पच्चीस हजार रु० टैक्स हम पर लगा दिया। हम गरीब इतना कहां से देते? दो वर्ष हमारा काम बन्द पड़ा रहा। आप अन्दाज नहीं लगा सकते कि उस दौरान हमने और हमारे कारीगरों ने कैसे गुजर बसर की होगी। मुकदमा अभी भी चल रहा है।" खां साहब व उनके कारीगरों के चेहरे पर तनाव की रेखाएं स्पष्ट थीं। कारीगरों की शिकायत थी —"हमें ऋण नहीं मिलता, हमारे पास लाइसेंस भी नहीं है। हम जी तोड़कर मेहनत करते हैं और सारा लाभ निर्यात करने वाली कम्पनियां ले जाती हैं (इन कारीगरों से एक्सपोर्ट कम्पनियां सस्ती दरों पर सामान खरीद लेती हैं और ऊंची दरों पर निर्यात कर वांछित मुनाफा कमाती हैं।) अतः हम चाहते हैं कि विदेशी ग्राहकों से हम सीधे सम्पर्क करें। हम पच्चीस वर्षों में दिल्ली से आगे नहीं जा सकते तो विदेश क्या जाएंगे? इस उद्योग को बेहतर बनाने के लिए कम से कम पच्चीस, तीस हजार रुपया चाहिए। हमारे पास इतना रुपया नहीं है यदि हमें ऋण मिल जाए और सींग भी उचित दरों पर मिलें तो हमें अच्छा लाभ मिल सकता है। हमें अपनी मेहनत का फल मिल सकता है। इस उद्योग से हम अपनी रोजी-रोटी ही मुश्किल से कमा पाते हैं। बच्चों की शिक्षा व अन्य अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहते हैं। यदि हमें सरकारी सहायता (ऋण व अन्य) यथा रूप में मिले तो इस उद्योग से काफी कमाई की गुंजाइश है।"

मैंने उन सबको आश्वासन तो दे दिया (झूठा कहूं या सच्चा) और उनसे विदा ली। मुझसे नमस्ते करते समय उनकी निगाहों में कुछ आशा थी। मेरे कुछ कदम आगे चलते ही वे कुशल हाथ पुनः सींगों को खूबसूरत बनाने में लग गए।

द्वारा श्री कीर्ति प्रकाश रस्तोगी,
साईनामिड इंडिया लिमिटेड,
पो० बो० 7049,
आसफली रोड, नई दिल्ली-110007

येलमनचिल्ली

क्षितिज पर नया सूर्य

येलमनचिल्ली । कितना सुन्दर नाम है । यह नाम आंध्र प्रदेश के जिस तालुक का है वह भी सुन्दर है । यहां का मनमोहक सौन्दर्य सुन्दर तस्वीर से कम नहीं है, एक तैल चित्र की भांति । एक ऐसी तस्वीर जिसमें वातावरण की तालिका ने समय के विभिन्न रंग भरे हैं । लेकिन कुछ समय पूर्व उसकी दूसरी ही तस्वीर थी जिसमें उभरी हुई थी गरीबी की आकृति, अज्ञानता, मृत्यु और एकाकीपन की आकृति । वह एक नीरस तस्वीर थी ।

लोगों के प्रयास से अब आकृतियों का रूप बदल गया है । अब पवन का वेग यहां की चमकीली चट्टानों को खुरदरी नहीं बनाता, न ही बरसात यहां की हरीतिमा को रौंदता है । आज येलमनचिल्ली के जीवन में एक नई दिशा ने मोड़ लिया है । अब जीवन और रहन-सहन का स्तर सुधर रहा है ।

येलमनचिल्ली में यह परिवर्तन एक विद्यालय के खुलने के साथ-साथ प्रारम्भ हुआ । वास्तव में पहला स्कूल खुला था 1834 में गांव डिमिली में । इसके आगे की पढ़ाई करने के लिए बच्चों को मीलों दूर जाना पड़ता था । कुछेक जाते भी थे, पर अधिकांश नहीं गए । एक शताब्दी बीत गई । किसी ने भी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं समझी । हां, डा० परमेश्वर राव एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने अपने गांव डिमिली में माध्यमिक विद्यालय की मांग जारी रखी ।

परमेश्वर राव ने संयुक्त राज्य अमरीका से पी० एच-डी० की उपाधि ली थी और खनिज विज्ञान के महत्वपूर्ण वैज्ञानिक थे । अपने अमरीका प्रवास के दौरान उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ा । सम्पन्न और अत्याधुनिक समाज के बीच रहते हुए भी हमेशा वे अपने डिमिली गांव के बारे में सोचते रहते थे । उनके मस्तिष्क में एक प्रश्न हमेशा झूलता रहता कि क्या वह इस समृद्ध समाज में बस जाएं या अपने सोए हुए गांव को जगाने, वहां विकास के बीज बोने, वापिस भारत जाएं ? अन्त में उन्होंने कई एश्वर्य और उन्नति के पदों का आमन्त्रण ठुकरा कर स्वदेश लौटने का ही संकल्प किया । उनकी आशा के सूत्रपात के रूप में डिमिली गांव में माध्यमिक विद्यालय का शुभारंभ हुआ ।

डिमिली विद्यालय

1966 में वे डिमिली में आए । विद्यालय बनाने में उन्हें दस वर्ष का समय लग गया । इसके लिए भूमि स्वैच्छिक दान से प्राप्त हुई । अध्यापकों ने भी अपनी सेवाएं निःशुल्क प्रदान कीं । 1967 और 1972 के बीच प्रति वर्ष एक नई कक्षा खोली गई । 1976 में पूरी सरकारी सहायता मिल जाने पर इसे जिला परिषद् को सौंप दिया गया । इस समय इसमें 196 विद्यार्थी और 11 अध्यापक थे । विद्यालय का निर्माण और डिजाइन ग्राम्य वातावरण के अनुरूप है जिसे देश के एक प्रसिद्ध वास्तुकार ने निःशुल्क बना कर दिया । बच्चों को शैक्षिक ज्ञान के अतिरिक्त यहां कृषि की भी व्यावहारिक और लिखित शिक्षा दी जाती है जो यहां के समाज का प्रमख व्यवसाय है ।

येलमनचिल्ली खण्ड में 78 गांव और 30 छोटे-छोटे गांव हैं । 1971 की जनगणना के अनुसार यहां की जनसंख्या 1,40,815 थी जिसमें 9682 अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लोग थे । इस क्षेत्र में शारदा और वराह नामक दो मौसमी नदियां वर्ष के कुछ महीनों, कृषि के लिए सिंचाई जल का साधन हैं । ये नदियां पहाड़ी दर्रों से गुजरती हुई बंगाल की खाड़ी में जाकर गिरती हैं । यहां के 1,05,165 एकड़ क्षेत्र में से 74,685 एकड़ कृषि योग्य है । लगभग 29,000 एकड़ भूमि में कुछ न कुछ सिंचाई साधन उपलब्ध हैं ।

कुछ सीमा तक यह क्षेत्र समतल कहा जा सकता है जिसमें चार लघु पर्वत श्रेणियां भी हैं । यहां की मृदा लाल-बलुई और लाल-दुमट है । औसत जोत क्षेत्र 2.5 एकड़ है और किसान परम्परागत ढंग से खेती करते हैं । धान और गन्ना गीली जमीन की फसलों के रूप में उगाए जाते हैं । कंद, रागी, दलहन, मिर्च और मूंगफली अन्य फसलें हैं । लगभग 20 प्रतिशत लोग भूमिहीन हैं जिन्हें फसल का आधा भाग जमींदारों को देना होता है । बैलों से खींचने का काम लिया जाता है एवं दुधारू पशुओं में भैंस मुख्य पशु है । डेयरी, मुर्गीपालन तथा मत्स्यपालन से लोग अनभिज्ञ थे । फसलों का काम समाप्त हो जाने पर लगभग 6000 लोग अतिरिक्त आजीविका हेतु निकटवर्ती शहरों व नगरों की ओर चले जाते हैं और वहां रिक्शा खींचने का काम या भूमिहीन मजदूरों के रूप में काम करते हैं । निरक्षरता यहां पर 80 प्रतिशत थी । यहीं पर डिमिली प्रकाश गृह भी है जिसे महान चोल सम्राटों करिकाल चोल और राज राजा चोल ने अपने उन सैनानियों के लिए निर्मित करवाया था जिन्होंने बंगाल की खाड़ी की लड़ाई का संचालन किया था । यहीं पर डा० राव ने उस बुझती हुई जीवन ज्योति को पुनः प्रज्वलित किया जो वर्षों से उपेक्षित पड़ी थी ।

नमक के काम में सफलता

डा० राव अपने पैतृक गांव में ही बस गए । उन्हें स्वयं और परिवार के भरण-पोषण के लिए कुछ तो करना ही था । उन्होंने गंभीरता से विचार किया और नमक की क्यारियां बनाने का एक काम उन्हें सूझ गया ।

समुद्र में जब ज्वार उठता है तो पानी दर्रों में से होकर समतल भूमि में आ जाता है । खारे पानी से भीगी हुई भूमि का विस्तार "डिमली" के पास वाकपाडु से उत्तर में मैरिपलम तक है । यह क्षेत्र नमक की क्यारियों के लिए बहुत ही उपयुक्त था । डा० राव ने वर्ष 1969 में "सौर लवण लिमिटेड" की स्थापना की जो अपने विचार को कार्य-रूप में ढालने का एक छोटा-सा साहसिक कदम था । सबने इसका विरोध किया । यहां तक कि उनके अपने परिवार वालों ने भी । वर्ष 1977 में ज्वारीय तरंग के कारण उनका सारा कार्य तहस-नहस हो गया । बाद में नमक की क्यारियों का काम फिर से

शुरू करने के लिए 150 एकड़ भूमि डिमली में और उतनी ही वाकपाडु में नमक की क्यारियों व खारे पानी के मत्स्य उद्योग को फिर से चलाने के लिए सरकार ने देना स्वीकार कर लिया। उजड़े हुए परिवारों के पुनर्वास के लिए इन दोनों स्थलों पर विचार हुआ। इससे "सौर लवण लिमिटेड" को नया जीवन मिला। वर्ष 1980 में "सौर लवण" ने 2,00,000 रुपये का व्यवसाय पंजीकृत करवाया। अधिकतर परिवारों ने अब नमक की क्यारियां बनाने का काम अपना लिया है। अब तो लगभग 1000 एकड़ भूमि पर नमक की क्यारियां बनाई जाती हैं। अनेक सहकारी समितियां इस कार्य में सक्रिय हैं। 10 समितियां तो पहले से ही कार्यरत हैं।

खारे पानी में मत्स्यपालन उद्योग बहुत ही सफल सिद्ध हुआ है। इस कार्य के लिए लोगों के परिश्रम से 8 तालाब बनाए गए जिनमें झींगा और मछली पालन होता है। व्यापारी समस्त उत्पादन को खरीदते हैं। एक शीत भंडार योजना भी बन रही है। इस साहसिक कार्य की सफलता से प्रेरित होकर निकटवर्ती क्षेत्रों में अधिकांश लोग एकत्र होकर मत्स्यपालन को तेजी से प्रगति की ओर ले जा रहे हैं। इसके लिए एक होड़ सी लगी हुई है।

भागवतुला धर्मार्थ न्यास (बी० सी० टी०)

डा० राव के पिता के सहयोग से वर्ष 1975 में भागवतुला चैरिटेबल ट्रस्ट (बी० सी० टी०) का पंजीकरण हुआ। आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्य मंत्री ने अन्य प्रांतों की सहायता से ट्रस्ट की तिजोरियों को यथेष्ट रूप से भरवा दिया था। इस ट्रस्ट की स्थापना विभिन्न वित्तीय एजेंसियों से सम्बन्ध बनाने हेतु हुई थी। ये बहुत सी एजेंसियां थीं जैसे— पी० ए० डी० आई०, चेतना, खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग, केनरा बैंक, स्टेट बैंक आफ इण्डिया, आन्ध्रा, बैंक श्री विशाखा-ग्रमीना बैंक, बैंक आफ इण्डिया, बैंक आफ बड़ोदा, एस० एफ० डी० ए०, आई० आर० डी० पी०, डी० पी० एम०, ट्राइसैम आदि। इन एजेंसियों की वित्तीय गतिविधियाँ ट्रस्ट के निर्देशन में ही संचालित होती हैं। यह ट्रस्ट परियोजना की प्रारम्भिक कठिनाइयाँ दूर होते ही उसे लाभ प्राप्तकर्ताओं के सुपुर्द कर देता है। किसी भी गांव के निर्माण पर ही यह ट्रस्ट वहाँ योजना प्रारम्भ करता है।

तीन लाख वृक्षारोपण

ट्रस्ट ने मानव भलाई के सभी पहलुओं पर कार्य किया। इनमें से कुछ अति महत्वपूर्ण कार्यों के बारे में यहां उल्लेख करना प्रासंगिक रहेगा। इनमें से एक कार्य वृक्षारोपण है। सरकार से 50 एकड़ ढालू जमीन बीस वर्ष के लिए पट्टे पर ली गई और वृक्षारोपण का एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। वैज्ञानिक रूप से किस्मों का चयन किया गया। यूक्लिप्टस और बांस को हवा रोकने के लिए रोपा गया जबकि काजू और नारियल को नकदी फसल के रूप में उगाया गया। वन चरागाह योजना के अन्तर्गत कूबबूल, चेन्चारु घास और सायरे ट्रो क्रोपस जैसी चारा फसलों के साथ इन्हें उगाया गया। 1978 से लगभग तीन लाख वृक्ष लगाए जा चुके हैं। फार्म ने किसानों को लागत मूल्य पर पौध बेच कर पौध बैंक का कार्य भी किया। यह योजना अब हरीपुरम गांव के 50 एकड़ और गोकोवाडा गांव के 44 एकड़ क्षेत्र में और बढ़ा दी गई है। यूकिलप्टस और नीबू घास में से तेल निकालने के लिए आसवन इकाई भी प्रारम्भ की गई। इमली, रीठा और केले के वृक्ष भी इसमें शामिल कर लिए गए। इस योजना के अन्तर्गत सैकड़ों सीमान्त किसानों को अच्छे जीवन-स्तर में जीने की सुविधा प्राप्त हुई। धारपलम गांव में भी वनरोपण कार्यक्रम चालू किया जा रहा है। वनरोपण योजना के अन्तर्गत विकसित भूमि को नियत समय में ही स्थानीय लोगों को सौंप दिया जाएगा। वामगिरी में भी 20 एकड़ भूमि ऐसी ही योजना के लिए रखी गई है।

लघु सिंचाई

किसानों के लिए लाभकारी ऐसी दूसरी योजना लघु सिंचाई के विकास की थी। छोटे किसान विकास एजेंसी, पाडी और राष्ट्रीय संसाधन विकास निगम के सहयोग से भू-जल स्रोतों का सर्वेक्षण किया गया। लगभग 200 बोरिंग कुंए और 100 खुले कुंए खोदे गए। लगभग 100 विद्यमान कुओं का पुनरुद्धार किया गया। 100 के लगभग कुओं को उर्जायुक्त बनाया गया। विकास के सहपक्ष के रूप में येलमनचिल्ली में विद्युत भी पहुंची। 1978 से लघु सिंचाई कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग 25 लाख रुपये खर्च किए गए। बी० सी० टी० ने अपनी जल अन्वेषण और खुदाई इकाई के द्वारा पिछड़े और दूरस्थ गांवों की जल आवश्यकता को पूरा करना जारी रखा।

ग्रामीण विकास में दुधारू और सामान ढोने आदि के लिए पशुओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। बी० सी० टी० के डेयरी विभाग में लगभग 100 गाय-भैंस हैं। इनके रहने के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध बांसों और अन्य सामग्री की सहायता से आवास बनाए गए। पशु फार्म सीमान्त और छोटे किसानों को लागत मूल्य पर दुधारू बछिया बेचता है। दुग्ध संग्रह केन्द्रों ने एक दुग्ध मार्ग खोला जो येलमनचिल्ली होता हुआ जाता है। 50 एकड़ क्षेत्र में फैली डेयरी में खादी और ग्रामोद्योग आयोग द्वारा एक गोबर गैस संयंत्र लगाया गया। डेयरी के साथ-साथ ही एक मुर्गीपालन केन्द्र भी प्रदर्शन-सह-प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में खोला गया जिसमें कुछ हजार मुर्गियां रखी गईं। यहां लगभग 50 किसानों को प्रशिक्षण दिया गया और कुछ नए मुर्गीफार्मों की स्थापना भी की गई। सब्जियां उगाने के लिए भी कुछ भूमि रखी गई। अण्डे, दूध, सब्जियां और कृषि औजार तथा आदान, श्रमिकों को लागत मूल्य पर दिए गए तथा उनकी साप्ताहिक मजदूरी में से इनका मूल्य काट लिया गया। आवासीय इलाकों में गृहवाटिका (किचन गार्डन) लगाने को प्रोत्साहन दिया गया। श्रमिकों में एक अल्पबचत योजना भी प्रारम्भ की गई। परियोजना कार्यालय में उनको पास बुकों में बचत की राशि की प्रविष्टि की जाती है।

उपयुक्त प्रौद्योगिकी

ग्रामीण वातावरण के लाभ के लिए बी० सी० टी० वायु और सौर ऊर्जा के उपयोग के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी का विकास कर रहा है। छोटे और सीमान्त किसानों के लिए डीजल और विद्युत मोटर अधिक खर्चीली पड़ती है। नमक की क्यारियों और मछली कुण्डों के लिए पानी का पम्प खींचने के लिए एक स्थानापन्न साधन की आवश्यकता थी। उन्होंने पवन चक्की का विचार बनाया।

1980 में ऐसी प्रथम पवनचक्की लगाई गई। फिर ऐसी ही 25,000 रुपये प्रत्येक लागत वाली दो और पवन चक्कियां लगाई गईं। इनमें प्रत्येक की क्षमता 21,000 गैलन पानी प्रति घण्टा निकालने की थी। केन्द्रीय सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग ने तीन डच टाइप की पवन चक्कियां नमक फार्मों पर स्थापित करने के लिए बी० सी० टी० को भेजीं। वाकपाडु में स्थापित एक सौर यंत्र से भी दो गैलन ताजा पानी प्रतिदिन प्राप्त किया गया। गांवों में सौर कुकर भी लोकप्रियता प्राप्त कर रहे थे। ट्रस्ट ने सामाजिक कार्यक्रमों में भी बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। स्वयं-सहायता आधार पर 12 गांवों में 18 प्रशिक्षण केन्द्र प्रारम्भ किए गए। ग्रामीणों की कार्य-कुशलता में वृद्धि करने के लिए विद्यालयों में अनौपचारिक तौर पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए। लगभग 3,000 ग्रामीणों को बढ़ईगीरी, वैल्डिंग, डेयरी, फीते बनाना आदि का प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण लेने वालों में लगभग 50 प्रतिशत महिलाएं थीं।

महिलाओं के कल्याणार्थ विभिन्न कार्य किए गए। आठ निराश्रित महिलाओं को एटिकोप्पका में रोगन के कार्य में प्रशिक्षण दिया गया। प्रशिक्षण स्क्रीन प्रिंटिंग, अचार और पापड़ बनाने, जूट के थले बनाने, खिलौने बनाने आदि का दिया गया। प्रशिक्षण के बाद ये सब स्वयं कमाने योग्य हो गईं। ट्रस्ट इन्हें कच्चा माल सुलभ कराने और तैयार माल की बिक्री करने में सहायता करता है। ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यकर्ता महिलाएं और दाइयों को भी प्रशिक्षण दिया गया ताकि ग्रामीणों की आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। महिला मंडलों और बालवाड़ियों ने भी प्रभावी ढंग से कार्य किया। ग्रामीण युवकों में ग्रामीण विकास और नेतृत्व की भावना पैदा करने का भी प्रयास हुआ। ट्राइसेम, खादी आयोग, केन्द्र और राज्य सरकारों, राष्ट्रीयकृत बैंकों और यहां तक कि विदेशी संगठनों ने भी आगे आकर ट्रस्ट की गतिविधियों में हाथ बंटाया।

ट्रस्ट के विचार एवं दर्शन

डा० राव के अनुसार यह ट्रस्ट वैसा है जैसा कि लोगों के अनुसार होना चाहिए। तीन ऐसे आधारभूत विचार हैं जिन पर ट्रस्ट का कार्य और दर्शन आधारित है। प्रथम, इसका विश्वास है कि ग्रामीण लोग बुद्धिमान हैं, वे समस्याएं समझते हैं और उनका निराकरण भी जानते हैं तथा जब तक विकास कार्यों में उनकी सक्रिय भागीदारी नहीं होगी सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती। दूसरे, ग्रामवासी चाहते हैं कि विशेषज्ञ दक्षता उन्हें उनके घर-गांव में ही प्राप्त हो जाए। उसके लिए इधर-उधर न जाना पड़े। तीसरे, आर्थिक कार्यक्रमों की रचना इस प्रकार हो कि लोगों में विरासत में प्राप्त नेतृत्व की योग्यता जागृत हो।

इसीलिए बी० सी० टी० तब तक किसी गांव में अपना कदम नहीं रखता जब तक उसे निमंत्रण न मिले। ट्रस्ट स्थानीय वातावरण के उपयुक्त प्रौद्योगिकी को अपनाता है। योजना जब चल निकलती है, ट्रस्ट उसमें से निकल जाता है और लोग स्वयं उसके कर्त्ता-धर्त्ता बन जाते हैं। निर्णय खुले में लिए जाते हैं और सब की सलाह को अमल में लाया जाता है। ट्रस्ट वित्तीय संस्थाओं और दलित-शोषित लोगों के मध्य सेतु का काम करता है।

येलमनचिल्ली में जो कुछ हुआ है उसकी खबर भारत में हुई हो या नहीं अन्तर्राष्ट्रीय जगत में उसकी चर्चा और प्रशंसा बखूबी की जा रही है। यहां तक कि विश्व बैंक के तत्कालीन अध्यक्ष राबर्ट मैकनमारा ने भी अपने व्यस्त समय में से थोड़ा समय येलमनचिल्ली देखने में व्यतीत किया है। संयुक्त राष्ट्र संघ की पत्रिका "फ्यूचर" ने भी ट्रस्ट के कार्यों की बहुत प्रशंसा की है। इस प्रकार येलमनचिल्ली ने हमें विकास की नई राह दिखाई है। □

फागुन ने

डा० सुधा गुप्ता

रात भर शबनम में
मल मल कर नहाई
छूने में मैली हो
ऐसी जुन्हाई—
बहक गई :
फागुन ने छू दिया था
हौले से !
शरमीली कमसिन
पलाश की दोशीजा
काढ़ने बैठी थी
कलियों का कसीदा
दहक गई :
फागुन ने छू दिया था
हौले से !
मखमल की क्यारी में
बैठी शेफाली
केसरिया फूलों से
चुनरी रंग डाली
महक गई :
फागुन ने छू दिया था
हौले से !

प्राचार्या,
मनोहर लाल स्नातकोत्तर
महिला महाविद्यालय, मेरठ–250002

सामूहिक प्रयासों का फल

बंजर भूमि से भरपूर फसल

गोपाल

बांदा (उत्तर प्रदेश) जनपद के खण्ड विकास मानिकपुर का सुखरामपुर खण्ड विकास कार्यालय से 17 किलोमीटर दूर, वनवासी क्षेत्र में, कई छोटे-छोटे टुकड़ों में बसा हुआ 65 परिवारों का गांव है। 1960 में बांदा की ही बबेरू तहसील से शोषण, उत्पीड़न तथा दरिद्रता से मुक्ति पाने हेतु ये परिवार यहां आकर बस गए थे। उत्तर प्रदेश सरकार ने प्रत्येक परिवार को जो चार-चार एकड़ भूमि दी थी वह ऊबड़-खाबड़ और बंजर थी। वहां झोंपड़ियां बनाकर ये परिवार रहने लगे तथा वन विभाग से उन्हें दैनिक कार्य भी यदा-कदा मिलने लगा। लेकिन अपनी रोजी-रोटी के लिए इस भूमि से इन्हें कुछ नहीं मिल पा रहा था। इस क्षेत्र में पेयजल का भी भयंकर संकट था और सिंचाई सुविधाएं नगण्य थीं।

अखिल भारतीय समाज सेवा संस्थान मानिकपुर (बांदा) का ध्यान यहां के दुखित परिवारों की ओर गया और उनकी अवस्था सुधारने हेतु इस पठारी क्षेत्र में निर्माण कार्य प्रारम्भ किया। सामाजिक चेतना के साथ-साथ संस्थान ने राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत इस गांव में एक तालाब का निर्माण किया। श्री सद्गुरु सेवा संघ ट्रस्ट से संस्थान ने अल्पावधि हेतु पाइप तथा एक दस अश्वशक्ति का पम्प इंजिन प्राप्त किया जिसके द्वारा तालाब से पानी लेकर अपनी निजी चार-चार एकड़ भूमि पर सिंचाई की और उसे कृषि योग्य बनाया। फलस्वरूप खरीफ के मौसम में कुछ परिवारों ने धान की अच्छी फसल प्राप्त की। इसके बाद रबी के मौसम में 17 परिवारों ने अपनी 35 एकड़ भूमि में पानी देकर 200 क्विंटल गेहूं प्राप्त किया। गेहूं की प्रथम लहलहाती फसल की सूचना सर्वत्र फैल चुकी थी। सारा गांव ही बदला हुआ था। इस एक सुखद आश्चर्य ने सबको प्रफुल्लित कर दिया। आज वहां एक सामूहिक बायोगैस संयंत्र भी लग चुका है।

फसल जब पक गई तो इसे काट कर घर ले जाने से पहले बस्ती वालों ने उत्सव मनाया। इस उत्सव में जिलाधिकारी बांदा तथा अन्य अधिकारियों ने भाग लिया। फसल, तालाब तथा वनवासियों में आई सामाजिक चेतना को देखकर सभी को अपार हर्ष हुआ। ढोलकी थाप, सरजू की आवाज-आलाप तथा रंग-गुलाल ने सारे वातावरण को रंगीन बना दिया। आज ये परिवार अपने अतीत के दुःख भूल गए हैं। मुक्त कंठ से जिलाधिकारी तथा क्षेत्रीय विधायक आदि ने संस्थान प्रयास की सराहना की। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्य में स्वयंसेवी संस्था, जिला प्रशासन, जनप्रतिनिधि तथा जनता की भागीदारी का यह एक अनूठा तथा आदर्श संगम था।

समन्वित ग्रामीण विकास योजना के फलस्वरूप इन परिवारों के पास 7 कूप तथा 5 पम्प इंजिन उपलब्ध हैं। अब दूसरा तालाब भी सुखरामपुर क्षेत्र में बनकर तैयार है। तालाब में पर्याप्त पानी है। इस तालाब से लगभग 50 एकड़ भूमि की सिंचाई सम्भावित है। सम्पर्क मार्ग भी बन रहा है। संस्थान के प्रयास से ग्रामीणों ने अपने सारे दूषण सुरापान आदि त्याग दिए हैं। अधिकांश लोगों ने परिवार कल्याण कार्यक्रम को अपनाया है तथा अपनी उपज से 2200 रुपये की बचत की है जो सार्वजनिक कार्यों हेतु खर्च की जाएगी। इस क्षेत्र में श्री सद्गुरु सेवा संघ ट्रस्ट चित्रकूट की निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएं प्रत्येक परिवार को प्राप्त हैं। ग्रामीण विकास में आज ऐसे ही समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। □

बांदा, उत्तर प्रदेश

दियासलाई--छोटा उद्योग बड़ा सहारा

दियासलाई का जीवन में कितना महत्व है, यह कोई तभी ठीक से समझ सकता है, जब आवश्यकता के समय उसे दियासलाई न मिले। और ग्रामीण गृहिणी की रसोई में तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है।

गांव के चूल्हे को जलाने वाली इस दियासलाई का काफी बड़ा भाग तमिलनाडु के मदुरै और रामनाडु जिले से आता है। इन जिलों के गांव-घरों के लिए दियासलाई बनाना पारम्परिक गृह उद्योग बन चुका है।

अस्वास्थ्यकर प्रतिद्वंद्विता और सुविधाओं के अभाव के कारण उन्हें लाभ नाममात्र ही मिलता था। मगर "लघु दियासलाई उत्पादक सेवा औद्योगिक सहकारिता" और "सघन ग्रामीण विकास कार्यक्रम" के आने से स्थिति में परिवर्तन आया।

दियासलाई उत्पादकों के सामने भंडारण-सुविधा का अभाव सबसे बड़ी बाधा थी। 1982 तक उन्हें कच्चा माल और तैयार माल तिरपाल की छाया में रखना पड़ता था। इस कारण दो प्रतिशत से भी ज्यादा माल सीलन और पानी रिसने के कारण खराब हो जाया करता था। इसके अतिरिक्त उन्हें अनुचित रूप से ज्यादा किराया भी देना पड़ता था। सघन ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत दियासलाई उत्पादकों को छोटे गोदाम बनाने के लिए आर्थिक सहायता और सलाह दी गई। इससे समूचे उद्योग का ही कायापलट हो गया।

मेट्टिमलाई लघु दियासलाई उत्पादक सेवा औद्योगिक सहकारी समिति लि०, सत्तूर एक ऐसा ही उदाहरण है। इसके 95,

सदस्य हैं, जिनके 82 दियासलाई कारखाने हैं। इन कारखानों के प्रत्येक एकक में 20 कर्मचारी हैं। इस तरह यह एक समिति 1,640 लोगों को सीधा रोजगार प्रदान करती है। सदस्य-कारखानों को माल बांटने से पहले समिति कच्चे माल की खरीद और उचित गोदामों में भंडारण की भी व्यवस्था करती है। बाद में, तैयार माल को थोक रूप में बेचने का दायित्व भी समिति पर ही होता है।

1982 में सघन ग्रामीण विकास कार्यक्रम द्वारा समिति को खपच्चियों आदि और तैयार माल को रखने के लिए गोदाम-निर्माण के लिए 3.3 लाख रुपयों की आर्थिक सहायता दी गई। समिति औसतन 65,000 रु मूल्य की 1,30,000 बण्डल दियासलाइयों का उत्पादन करती है और यह तुरन्त बिक भी जाया करती हैं। समिति को वर्ष में औसतन 30,000 रुपयों का लाभ होता है। अब समिति एक ही समय में काफी मात्रा में कच्चा माल और 1.8 लाख बंडल दियासलाई संग्रह कर सकती है।

कुशल हाथ दियासलाई की डिब्बियां तैयार करते हैं, लेबल चिपकाते हैं, तीलियों को व्यवस्थित करते हैं और बिजली की गति से बंडल तैयार करते हैं। चिप्पियों को चिपकाने का काम अपने आप में एक कला है। एक दिन में पांच ग्रुस के बंडलों में चिप्पियों को चिपका कर एक श्रमिक आठ रुपए तक कमा लेता है। डिब्बियों में तिलियां भरना भी एक जटिल कार्य है। एक दिन में 30 डिब्बियां भर कर 17 रुपये कमाए जा सकते हैं।

छः सदस्यों का परिवार एक महीने में दियासलाइयों के 200 बंडल आसानी से तैयार कर सकता है। प्रत्येक बंडल में 60 दर्जन दियासलाई की डिब्बी होती है। समिति अपने सदस्यों को आवश्यकतानुसार कच्चा माल खरीदने के लिए अग्रिम धन भी उपलब्ध कराती है। मेट्टिमलाई समिति की तरह मदुरै और रामनाडु में सैकड़ों समितियां हैं। ये समितियां दियासलाई उत्पादकों को पूरा वर्ष काम में लगाए रखती हैं। □

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमजोर वर्ग ....

(पृष्ठ 7 का शेषांश)

राष्ट्रीय बाढ़ आयोग के अनुसार सम्प्रति देश की 4 करोड़ हैक्टेयर भूमि प्रतिवर्ष बाढ़ से प्रभावित होती है जबकि नियोजन के आरंभ में केवल 2.5 करोड़ हैक्टेयर भूमि ही बाढ़ से प्रभावित होती थी। कतिपय राज्यों में बाढ़ और सूखा हर वर्ष की कहानी है। प्रकृति के प्रकोपों के प्रति सजगता नियोजन का मूल अंग होना चाहिए। नहरों से सिंचित क्षेत्रों में समुचित जल प्रबन्ध की कमी के कारण खारेपन की समस्या सतत बढ़ रही है। नहरों के किनारे की भूमियों खरीफ की धान फसल को छोड़कर अन्य सभी के लिए व्यर्थ हो रही है। यदि समुचित प्रबन्ध न किया गया, तो निकट भविष्य में ये भूमि सभी फसलों के लिए व्यर्थ हो जाएंगी। समुचित भूमि प्रबन्ध की आवश्यकता के प्रति इस समष्टिगत विश्लेषण से दो निष्कर्ष निकलते हैं। एक तो यह कि इससे देश की तमाम कमजोर भूमि को उत्पादक बनाकर समग्र उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। और दूसरे यह कि व्यष्टि स्तर पर बाढ़, सूखा, पानी के अभाव और खारेपन की समस्या की चोट सबसे अधिक छोटे और सीमान्त कृषकों को लगती है। इन किसानों के पास जो थोड़ी बहुत जमीन है उस पर इस प्रकार की किसी समस्या के उदय के परिणाम-स्वरूप उनकी समग्र फसल ही नष्ट हो जाती है और वे वैकल्पिक आय के अभाव में वर्ष भर दुर्दशा का जीवन बिताने के लिए बाध्य हो जाते हैं।

सहायक व्यवसाय और ग्रामोद्योग :

सामान्य जोत पर प्रदर्शन फार्मों के औसत उत्पादन के बराबर उत्पादन प्राप्त करने में अभी प्रर्याप्त समय और प्रविधि के प्रसार और विकास की आवश्यकता है। इस दिशा में सतत प्रयास जारी हैं। शोधशालाएं और प्रयोगशालायें इस दिशा में उत्तरोतर प्रयास कर रही हैं। लेकिन सफलता भविष्य ही बताएगा जो अस्पष्ट और अनिश्चित होता है। अतः वर्तमान आवश्यकता है कि सहायक व्यवसायों और ग्रामोद्योगों का व्यापक प्रसार किया जाए। लघु और सीमान्त कृषक अपना कृषि कार्य करते हुए सहायक व्यवसायों यथा दुधारू पशु पालन, भारवाहक पशु पालन, मत्स्य पालन एवं मुर्गीपालन इत्यादि द्वारा कुछ अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकेंगे। इस संदर्भ में राजकीय प्रयास पिछले तीन दशकों से किया जा रहा है। परन्तु सफलता अभी भी अत्यन्त सीमित रही है। कुछ तो इस कारण कि प्रदत्त सुविधाएं सीमित रही हैं और कुछ इस कारण कि सहायता पाने वाले लोग इसके उपयोग के प्रति अधिक तल्लीनता नहीं प्रदर्शित करते। सहायक व्यवसायों के उत्पादनों के संदर्भ में एक मुख्य बात यह है कि उनके उत्पादन के मांग की समस्या नहीं है। सम्प्रति मांग की तुलना में उत्पादन कम है। भविष्य में ग्रामीण जनता की आय बढ़ने पर इन सहायक व्यवसायों के उत्पादन पर ही अधिक व्यय होने की संभावना है। इसके अतिरिक्त इन निर्बल वर्ग की समस्याओं के निदान हेतु विकास कार्यक्रमों में कृषि एवं सहायक व्यवसायों के साथ ग्रामीण उद्योग को समान महत्व दिया जाना चाहिए और कृषि विकासार्थ विनियोजित मुद्रा के अनुरूप ही ग्रामीण उद्योग के विकास पर व्यय किया जाना चाहिए। □

(साभार–कृषि चयनिका)

पहला सुख निरोगी काया

फ्लुओरोसिस

आन्ध्र प्रदेश में विशेषकर ग्राम बाटलापल्ली और इसके पड़ोसी जिलों में फ्लुओरोसिस के फैलने से उत्पन्न स्थिति और इस बारे में सरकार द्वारा की गई कार्यवाही के बारे में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री श्री बी० शंकरानन्द ने बताया कि फ्लुओरोसिस स्थानिकमारी के रूप में, आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान और पंजाब के कुछ इलाकों में फला हुआ है। आन्ध्र प्रदेश में ग्राम बाटलापल्ली तथा नलगौंडा जिले के आसपास के इलाकों को स्थानिकमारी वाला क्षेत्र माना जाता है। लेकिन आन्ध्र प्रदेश में अचानक फ्लुओरोसिस फैल जाने के बारे में सरकार को कोई विशेष सूचना नहीं मिली है। इसके अतिरिक्त, फ्लुओरोसिस महामारी के रूप में कदापि नहीं हो सकता।

फ्लूओरोसिस तब होता है जब पीने वाले एक लीटर पानी में फ्लुओराइड की मात्रा 3 मिली ग्राम से अधिक हो जाती है। यद्यपि फ्लुओराइड की कुछ मात्रा (एक लिटर में एक मिलीग्राम) दन्तक्षरण को रोकने में सहायक होती है, तथापि पानी में फ्लुओराइड की अधिकता दन्तक्षय और अस्थिपरिवर्तन (बोनीचेंजेस) का कारण बनती है।

फ्लुओरोसिस एक स्थानीय समस्या है जो मूलतः स्थानीय पेयजल में फ्लुओराइड होने से पैदा होती है। पानी को उबालने या नितारने जैसा कोई सरल प्रत्यक्ष तरीका नहीं है जो कारगर हो। राष्ट्रीय पर्यावरणात्मक इंजीनियरी अनुसन्धान संस्थान, नागपुर ने रासायनिक उपचार द्वारा फ्लुओराइड को हटाने की एक विधि विकसित की है। इसे "नालगौंडा विधि" कहते हैं। फिटकरी और मैंगनीशियम-मेटा-सिलिकेट जसे पदार्थ भी फ्लुओराइड को हटा सकते हैं। घर पर भी, गर्म की हुई धान की भूसी वाले बर्तनों से पानी को छानकर, तीन बर्तनों वाली विधि (अर्थात् एक बर्तन से पानी छानकर दूसरे बर्तन में डालने) द्वारा फ्लुओराइड को हटाना संभव है।

वैसे, अन्ततः निष्कर्ष यह है कि जल के वैकल्पिक स्रोत ही इस समस्या का अन्तिम रूप से समाधान कर सकते हैं। सतह पर रखते हुए पानी में फ्लुओराइड की मात्रा कम होती है। अतः सर्वोत्तम निवारक उपाय यहीं होगा कि स्थानिकमारी वाले क्षेत्रों में सुरक्षित पेय जल के वैकल्पिक स्रोत उपलब्ध कराए जाएं।

गांवों में पीने के पानी की व्यवस्था करने के कार्य को अप्रैल 1980 से कार्यान्वित की जा रही राष्ट्रीय छठी पंचवर्षीय (1980–85) में उच्च प्राथमिकता दी गई है। भारत सरकार के कहने पर संबंधित राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्रों के प्रशासनों द्वारा देश व्यापी सर्वेक्षण किया गया था ताकि उन गांवों का पता लगाया जा सके जिनकी ओर तत्काल ध्यान देने की जरूरत है। समस्या-प्रधान गांव की पहचान करने के लिए भारत सरकार द्वारा निर्धारित मानदण्ड इस प्रकार थे:—

(क) ऐसे गांव जिनमें 1.6 किलोमीटर की दूरी तक कोई जल स्रोत नहीं थे। अथवा जहां पानी 15 मीटर से अधिक गहराई पर उपलब्ध था।

अथवा

(ख) वे गांव जिनके पानी के स्रोतों में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक अधिक खारापन लौह, फ्लुओराइड तथा या अन्य विषाक्त तत्व थे।

अथवा

(ग) वे गांव जिन्हें उपलब्ध पानी के कारण पानी से पैदा होने वाली हैजा गिनीवर्म आदि जैसी बीमारियों से खतरा था।

अतः यह देखा जाए कि ऐसे समस्या-प्रधान गांवों, जिन्हें पीने के साफ पानी की व्यवस्था करने के लिए प्राथमिकता देने की जरूरत है, के बारे में अपनी नीति निर्धारित करते समय सरकार ने फ्लुओरोसिस के निवारक पहलू को पहले ही ध्यान में रखा है।

उपलब्ध नवीनतम सूचना के अनुसार इस कार्यक्रम के अन्तर्गत देश के कुल 45,844 गांवों में पीने के साफ पानी के कम से कम एक स्रोत की पहले ही व्यवस्था कर दी गई थी। इनमें से 5,160 गांव आंन्ध्र प्रदेश में ही हैं।

सरकार को फ्लुओरोसिस सम्बन्धी समस्याओं के बारे में पूरी जानकारी है और वह इस समय प्रभावित राज्यों के पूर्ण सहयोग से पीने के साफ पानी की व्यवस्था कर और स्वास्थ्य शिक्षा उपायों को तेज कर इस समस्या को हल करने में जुटी हुई है। □

कम खर्च में पौष्टिक खुराक

आशा रानी व्होरा

अच्छी खुराक का मतलब महंगी खुराक ही नहीं होता। थोड़ी समझ बूझ से, खाने की आदतों में थोड़ा परिवर्तन करके आप चाहें तो कम खर्च में भी ताकत देने वाली खुराक जुटा सकती हैं।

1. गेहूं को खूब अच्छी तरह साफ करके पिसाइये, फिर आटे को छानिये नहीं, क्योंकि छानकर छीजन के रूप में जो तत्व आप निकाल देती हैं, वह पशुओं के लिए तो पौष्टिक खुराक बन सकती है पर आपके लिए छना हुआ आटा कम ताकतवर रह जाता है। इसलिए एक तो आटे को बिना छाने पकाइए, दूसरे गेहूं के आटे में उसका 16वां भाग मूंगफली का आटा मिला लीजिए। इस तरह बच्चों की बढ़त के लिए जो प्रोटीन आपको बहुत सस्ते में मिलेगी, वह मांस मछली, अण्डे से ज्यादा होगी। प्रोटीन की बाकी कमी आप दालों और फलियों से पूरी कर सकती हैं। और यह आप घर में पकाती ही होंगी।

2. जिस तरह गेहूं के छिलके में उसके पौष्टिक तत्व होते हैं और आटा छानने से उन पौष्टिक तत्वों की कमी हो जाती है इसी तरह सब्जियों के छिलकों में भी वे सारे गुण हैं जो बीमारियों की रोकथाम करते हैं। तो सब्जियों के छिलके भी फेंकिए नहीं, कतर कर अलग से सब्जी और कचरी बनाइये। इनसे आपको मुफ्त में भरपूर विटामिन और खनिज पदार्थ मिलेंगे। और अलग से विटामिन की गोलियों की जरूरत नहीं रहेगी। दालों को भी छिलके सहित पकाने पर उनका अधिक लाभ मिलेगा।

3. आप मेवों पर पैसा नहीं खर्च कर सकतीं तो कोई बात नहीं। मौसम में खाये गए खरबूजों और तरबूजों के बीज धो कर, सुखा कर रख लीजिए। फुरसत में इन्हें छीलिए और सर्दी के दिनों, नाश्ते के लिए दलिए आदि में तथा गर्मी में ठण्डाई में पीस कर बरतिए। बादाम जितना ही लाभ आपको इन छिले बीजों से मिलेगा और वह भी मुफ्त में।

4. यदि दूध नहीं मिलता तो उसकी जगह सप्रेटा दूध और छाछ से काम चलाइये। केवल चिकनाई के बिना शेष सारे पौष्टिक तत्व आपको इनसे मिलेंगे। वैसे अच्छा यह होगा कि शेष खर्चों में कमी करके भी छोटे बच्चों, गर्भवती माताओं और दूध पिलाने वाली माताओं के लिए दूध जुटाया जाए और घर के शेष सभी सदस्यों के लिए सप्रेटे दूध की व्यवस्था कर ली जाए। पेट ठीक रखने के लिए छाछ सभी के लिए उपयोगी होगी। यहां आप यह भी नोट कर लें कि आटे में मूंगफली का आटा मिलाएं या वैसे बच्चों को थोड़ी मूंगफली खिलाएं तो दूध न मिलने पर भी उनकी बढ़त में रुकावट नहीं आएगी।

5. प्रोटीन, खनिज पदार्थ और विटामिन तीनों की भरपूर मात्रा सस्ते में जुटाने का एक अन्य तरीका है: अंकुरित अनाज व अंकुरित दालें। चने, साबुत मूंग, गेहूं को बारी-बारी से भिगोकर अंकुरित करके नाश्ते में खाइये और खिलाइये। इसकी विधि है, अनाज या साबुत दाल को रात भर पानी में भिगोएं, फिर निकाल कर एक थैली में डाल कर, खूंटी से लटका दें। मौसम अनुसार तीसरे या चौथे दिन उसमें से नन्हे अंकुर फूट आएंगे। इन्हें हल्का छोंक कर या बिना पकाए नमक डालकर नाश्ते में परोसें। जो लोग अण्डा मांस नहीं खाते या नहीं खरीद सकते और इनके बदले पनीर भी नहीं जुटा सकते, उनके लिए अंकुरित अनाज और दालें पौष्टिकता की दृष्टि से एक वरदान हैं। इसमें कुछ अधिक खर्च भी नहीं पड़ता।

6. खिचड़ी पकाते समय चावल, साबुत मूंग और दलिया मिलाइये। सादे चावल, सादी खिचड़ी या दाल भात से यह खिचड़ी अधिक पौष्टिक होगी।

7. मोटे अनाजों—जौ, मक्का, बाजरा, रागी, कोदों आदि के साथ पालक, चौलाई, कुलफा, हरा धनिया, मूली के पत्ते जैसी पत्तियां मिलाइये। इस तरह हरे सागों के साथ इन अनाजों का भी पौष्टिक गुण बढ़ जाता है। ये सारी चीजें गांवों में प्रायः खेतों से या सस्ते में आसानी से मिल जाती हैं।

8. गेहूं के साथ जौ और चना मिला कर पिसा लीजिये। यह आटा भी अकेले अनाज के आटे से ज्यादा ताकतवर होगा।

9. हरी पत्ती वाला साग और चने की दाल मिलाकर खाइये। मट्ठे में बेसन और हरा साग मिलाकर कढ़ी बनाइये। ये पौष्टिक भाजियां होंगी।

10. भात पकाते समय कभी भी चावलों का मांड निकाल कर न फेंके, नहीं तो चावलों के पौष्टिक गुण कम हो जाएंगे। बिना पालिश वाला हाथ-कुटा चावल पकाइये और उसमें पानी इतना डालिए कि मांड न निकालना पड़े। कभी मांड निकालना ही पड़े या सब्जी उबालकर उसका पानी निकालना पड़े तो इस मांड या सब्जी के पानी को आटे में गूंथ लीजिए या दाल में डालकर पका लीजिये, जिससे पौष्टिक तत्व बेकार नहीं जाएंगे। इसी तरह दूध फटा कर पनीर बनाते समय फटे दूध का पानी भी नहीं फेंकना चाहिए।

11. दाल धोकर पीठी बनाते समय निकाले गए छिलकों को आटे में गूंथिये व नमक, मिर्च और अजवाइन मिलाकर परौठे या रोटी सेकिए। ये रोटियां स्वादिष्ट भी होंगी और पौष्टिक भी।

12. यह जरूरी नहीं कि आप सेब, अंगूर जैसे महंगे फल ही खाएं। सभी मौसमी फल और सब्जियां--अमरूद, पपीता, आंवला, नीबू, गाजर, टमाटर आदि में से जो भी मौसम में सस्ते मिलें, खाइये। और इन्हें घर में भी उगाइये। पौष्टिकता

(शेष पृष्ठ 27 पर)

लीजिए, पेश है, एम एफ़ २४५–
विश्वसनीयता और किफ़ायत का संगम

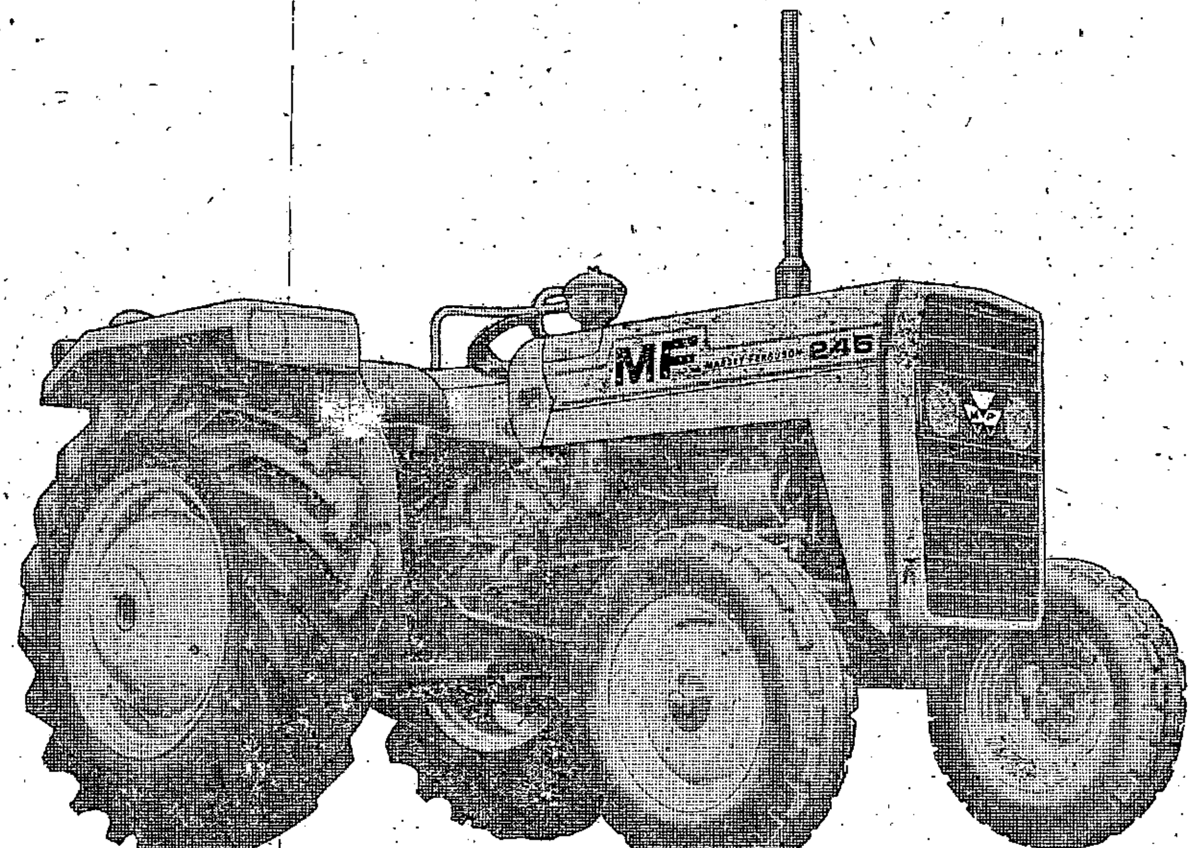

- अत्यत ईंधन-कार्यक्षम ४७ हॉर्स पावर डीज़ल इंजिन
- ८ फ़ॉरवर्ड और २ रिवर्स स्पीड गियर बॉक्स
- सील्ड डिस्क ब्रेक्स (लेना चाहें तो)
- शक्ति-आधारित स्टीअरिंग, देश में अपने ढंग का एकमात्र
- दबाव-नियंत्रित हायड्रॉलिक्स
- २०० से भी अधिक महत्त्वपूर्ण स्थानों पर स्थित पुर्ज़ों व बिक्री सुविधा केन्द्रों के ज़रिए विक्रयोपरांत सेवा.

MF Massey Ferguson

TAFE

ट्रैक्टर्स एण्ड फ़ार्म इक्विपमेंट लिमिटेड

मद्रास

कृषि-विकास-क्षेत्र में नयी दिशाएँ

MACT/50/Hin

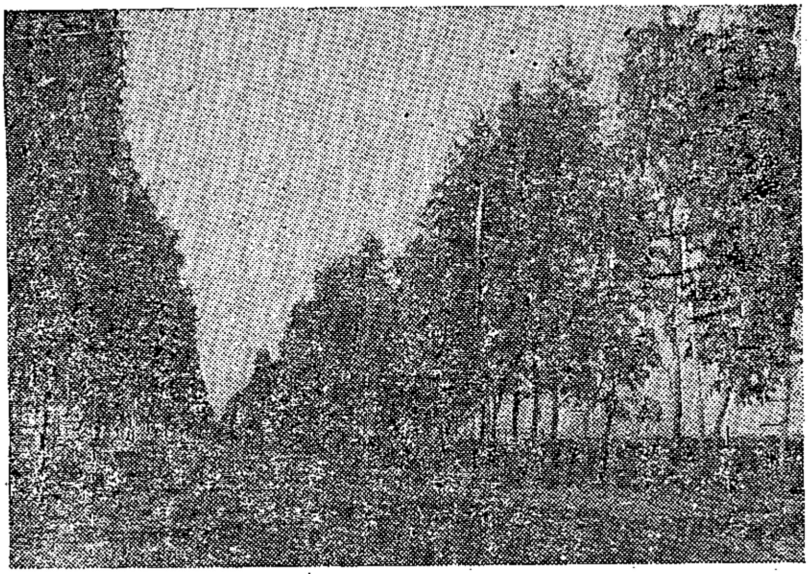

युक्लिप्टस :

दोस्त या दुश्मन

वीरेन्द्र गोहिल

कुछ लोग इसके नाम से चौंकते हैं और इसे दुश्मन कहते हैं। क्योंकि उनकी धारणा है कि ये पेड़ न केवल अपने खेत का बल्कि आसपास के खेतों का भी पानी सोख लेता है। कुछ किसानों ने इसे 'पानी सोख पेड़' की संज्ञा भी दी है। दूसरी तरफ कुछ किसान ऐसे हैं जो इसे दोस्त मानते हैं। इसे बहूपयोगी पेड़ मानते हैं। यहां तक इस पेड़ से प्रेम करते हैं कि अनाज की जगह खेतों में इसकी खेती करने लगे हैं। इसके गुणों की प्रशंसा करने लगे हैं सरकारी स्तर पर भी जगह-जगह युक्लिप्टस भारी संख्या में लगाया गया है।

एक पढ़े-लिखे युवा किसान ने इस पेड़ की तुलना खतरनाक विदेशी एजेन्ट से की। उसका कहना है—हर विदेशी की तरह यह वृक्ष भी हमारे हरे-भरे संसार को मिटाने वाला साबित होगा। जिस तरह विदेशी याचक बनकर आते हैं और फिर शासक बनकर छा जाते हैं, उसी तरह यह वृक्ष भी भारतीय वृक्षों का स्थान ले रहा है। इसकी लम्बाई और गोरापन, कम समय में ही परिपक्व हो जाना और पशु-पक्षियों को दूर रखने जैसी बातें इसके लाभ बताए जाते हैं जो किसान को ललचाते हैं। लेकिन ये गुण पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति के समान हैं, जिसके दुष्परिणाम आज हमारा देश भोग रहा है। लेकिन आप यह भी जानते हैं—कई किसान खेतों में गेहूं, चावल, ज्वार बाजरा, दालें पैदा नहीं कर रहे। वे युक्लिप्टस लगा रहे हैं। आमदनी के लिए 5–7 साल में हर पेड़ से 100–150 रुपयों का लाभ होगा। क्या इससे हमारे अनाज के उत्पादन पर असर नहीं पड़ेगा?

युक्लिप्टस का एक पहलू यह भी है कि गुजरात, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब और हरियाणा सहित अनेक राज्यों के किसान इसे सैंकड़ों और हजारों की संख्या में लगा रहे हैं। भावनगर जिले के किसान दीपसिंग मघाभाई ने तो अपने खेत में पचास हजार नीलगिरि के पेड़ लगाए हैं। कहते हैं—मेरे पास जो जमीन थी उसमें कोई पैदावार नहीं होती थी। अब उसमें पचास हजार पेड़ हैं। खाली कटाई से मुझे बहुत लाभ होगा। पहले हमारे खेतों को लू और समुद्री हवाओं से बहुत नुकसान होता था। अब हमारी फसलें भी बचने लगी हैं। इन वृक्षों की पत्तियां खाद का काम करती हैं। इससे गोबर बचेगा और जलाने के लिए ईंधन भी मिलेगा। खेती के काम आने वाले औजार बनेंगे और घर बनाने के लिए भी लकड़ी मिलेगी। कीजावदर के किसान बचुभाई परमार इस वृक्ष के आजाने से बहुत प्रसन्न हैं। कहते हैं—हमने अपने खेतों में दो-दो फुट छोड़कर नीलगिरि के पौधे लगाए हैं। तीन-चार बरसों में ही हमें आमदनी होने लगेगी। हमारे आसपास लोगों ने इसकी खेती करके खूब धन कमाया है। ग्राम सांगवाड़ी के जीवराज भाई का कहना है—इसने हमारे कई प्रश्न हल कर दिए हैं। हमारे यहां पानी की कमी रहती है। मौसमी खेती के लिए मजदूर नहीं मिलते। दूसरी किस्म की खेती में लागत बहुत आती है। इन पेड़ों के लिए पानी की जरूरत ही नहीं है। देखभाल भी ज्यादा नहीं करनी पड़ती। जानवर भी नहीं चरते। सबसे बड़ी बात यह है कि अनाज को संग्रह करने के लिए जो धन व्यय करना पड़ता था इससे वह भी बच जाता है। जहां तक आमदनी का सवाल है अनाज और मौसमी पैदावारों के मुकाबले वृक्षों से होने वाली आमदनी कहीं ज्यादा है। हमें तो पीढ़ियों से मिलने वाली तकलीफों से मुक्ति मिलने का सुख मिल रहा है। उद्यान पंडित के पुत्र श्री विट्ठल भाई पटेल भी इस वृक्ष से बहुत प्रभावित हैं और इसे एक सच्चा दोस्त मानते हैं। कहते हैं—फसल से चार-पांच गुना ज्यादा मुनाफा होता है। ईंधन के लिए लकड़ी मिल जाती है। खेत सुधर जाते हैं। हवा से होने वाला नुकसान रुक जाता है। दूर-दूर के किसान हमारी इस खेती को देखने आते हैं। जहां हमने घने वृक्ष लगाए हैं वहां तापमान 5 सेंटीग्रेड कम महसूस होता है। ऐसी बढ़िया ठंडक लगती है कि जैसे आप किसी पर्वतीय इलाके में हों। यदि सभी जगह

ऐसा हो जाए तो सौराष्ट्र का हवामान ही बदल जाएगा और अच्छी बारिश होने लगेगी।

युक्लिप्टस के बारे में भारतीय वन अनुसंधान संस्थान और महाविद्यालय, देहरादून ने एक पुस्तिका छापी है। इसमें बताया गया है कि युक्लिप्टस की 500 नस्लें हैं। जिनके गुण और उपयोगिता भी अलग-अलग हैं। इन्हें मौसम और स्थान की सही जानकारी प्राप्त करके लगाना चाहिए। इस वृक्ष का मूल स्थान आस्ट्रेलिया महाद्वीप है। भारत में यह सन् 1790 में नंदी हिल्स, मैसूर में लगाया गया। सन् 1843 में इसे नीलगिरि पहाड़ियों में लगाया गया। सन् 1952 में कर्नाटक राज्य में बड़े पैमाने पर इसका रोपण किया गया। इन स्थानों में लगाए गए वृक्ष की नस्ल का नाम है—युक्लिप्टस हाइब्रिड या मैसूर गम। बाद में तो अन्य राज्यों में इसका फैलाव हो गया। यहां तक कि सरकार की ओर से लगाए जाने वाले वृक्षों में भी इसे प्राथमिकता मिलने लगी। सड़क के किनारे कई-कई कतारों में, नहर के किनारे, रेलमार्ग के किनारों पर, नई बस्तियों में जहां देखिए वहां युक्लिप्टस ही नजर आने लगा। वन अनुसंधान संस्थान ने इस पर अनेक प्रयोग किए और संकर जातियां विकसित कीं। इस वृक्ष से ईंधन, लकड़ी मिलने के अलावा इसकी पत्तियों और टहनियों से तेल निकाला जाता है। यह तेल टूथपेस्ट, सुगंध और साबुन में काम में लाया जाता है। अब इससे माचिस की तीलियां भी बनाई जाने लगी हैं। इसकी लकड़ी मजबूत होती है। अनेक देशों में यूक्लिप्टस लगाया गया है। संबद्ध पुस्तक में इस धारणा को भी गलत बताया गया है कि युक्लिप्टस अन्य वृक्षों के मुकाबले जमीन से अधिक पानी खींचता है। इस बारे में भारत, आस्ट्रेलिया और इज़ाइल में भी अनुसंधान कार्य किए गए हैं। अनुसंधान से यह पता चलता है कि रोजवुड और चीड़ के वृक्ष इससे अधिक पानी सोखते हैं। युक्लिप्टस कम पानी लेकर अधिक लकड़ी देता है। इससे कागज बनाने के लिए लुगदी की मांग पूरी की जा सकती है, जिससे करोड़ों रुपयों की विदेशी मुद्रा बचाई जा सकती है।"

कई जानकार युक्लिप्टस पेड़ का गुणगान करते नहीं थकते। लेकिन अनेक लोग आज भी इसे मन से स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है—जब हमारे देश में युक्लिप्टस नहीं आया था तब क्या हमारे यहां वन नहीं थे, वृक्षों की कमी थी, हमारी जरूरतें पूरी नहीं होती थीं।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण संस्थान ने भारत के पेड़-पौधों के बारे में जानकारी देने वाली पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया है, जिनमें भारत की समृद्ध वनस्पति के बारे में बताया गया है। भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक डा० सुधांशु कुमार जैन के अनुसार—भारत में लगभग 15 हजार किस्म के पुष्पी पौधे पाए जाते हैं जो संसार के अधिकांश देशों की तुलना में बहुत अधिक हैं। इनमें से लगभग 5 हजार जातियां ऐसी हैं जो केवल भारत में पाई जाती हैं। करीब 2 हजार जातियां ऐसी हैं जो संकटग्रस्त हैं। अनेक जातियां तो लुप्त भी हो गई हैं और कुछ होती जा रही हैं। हमारे देश में कुछ विशिष्ट प्रकार की जातियां भी हैं जिन्हें संसार के वैज्ञानिकों ने देखा तक नहीं था।

देश में विदेशी प्रजातियों के प्रति वन अधिकारियों के लगाव के बारे में डा० जैन का कहना है—यह सही है कि हमारे देश में विदेशी प्रजातियों के प्रति विशेष रुझान रहा है। हमने जो विदेशी प्रजातियां अपने देश में लगाई हैं उन्हें पूरी तरह से अस्वीकृत कर देना उचित नहीं होगा। किन्तु अपने देश की समृद्ध हजारों किस्म की जातियों की उपेक्षा भी ठीक नहीं है। हमारे यहां भी अनेक ऐसे वृक्ष हैं जो जल्दी उगते हैं, बहुत उपयोगी हैं और वे फिर अपनी निजी जलवायु के हैं। हर देश की जलवायु में उगने वाले पौधों का महत्व केवल फल और लकड़ी के लिए नहीं होता। उनके नीचे उगने वाली लताएं और विचरने वाले जीव-जन्तुओं से भी रिश्ता होता है।

विदेशी वृक्षों पर लताएं नहीं बढ़तीं और उनके नीचे पौधे भी नहीं उगते। इस बारे में कम लोगों का ध्यान गया है। भारतीय वन अनुसंधान संस्थान और महाविद्यालय के अध्यक्ष श्री के० एम० तिवारी ने युक्लिप्टस के बारे में फैली भ्रान्तियों पर अपने विचार आकाशवाणी से प्रसारित 'राष्ट्रीयरूपक—वृक्षों का संसार : एक हरा भरा परिवार' में बताए हैं—हमें पता है कि युक्लिप्टस के बारे में अनेक शंकाएं व्यक्त की जा रही हैं और लोग इससे चिंतित हैं। इस समय विश्व के जाने माने वैज्ञानिक जिन्होंने युक्लिप्टस पर अनुसंधान किया है उनसे भी हमने लिखत-पढ़त की है और अभी तक जो राय मिली है वह ऐसा दिग्दर्शित नहीं करती कि इसके लगाने से बहुत बड़ा नुकसान होने वाला है।

अनुसंधानकर्ताओं का यह कहना है कि हर पेड़ पानी सोखता है। बिना पानी के वह कैसे बढ़ सकता है। कुछ पेड़ ज्यादा पानी सोखते हैं कुछ कम। युक्लिप्टस की अनेक छोटी-छोटी जातियां हैं जो एक दूसरे से काफी भिन्न हैं। कुछ रेगिस्तानी क्षेत्र के लिए ठीक हैं तो कुछ दलदली क्षेत्र के लिए ठीक हैं। लगभग सौ साल पहले इटली में दलदली जमीन को सूखा करने के लिए युक्लिप्टस की एक प्रजाति रोबस्टा लगाई गई थी। लेकिन अभी तक, मैं जोर देकर कहना चाहता हूं कि जहां भी युक्लिप्टस लगाया गया है वहां पानी का स्तर नीचे चला गया हो ऐसा प्रमाणित नहीं होता। आर्थिक दृष्टि से यह एक उपयोगी वृक्ष है। इसीलिए तो पंजाब, हरियाणा, गुजरात के किसानों में इस पेड़ को लगाने की होड़ लगी हुई है। वे अब इसकी खेती करने लगे हैं।

जब श्री तिवारी से यह प्रश्न किया गया कि सरकारी स्तर पर भी इसी वृक्ष को लगाने में प्राथमिकता दी जाती है तो इससे यह पता लगता है कि हमारे देश में इतने गुणों वाला कोई और वृक्ष नहीं है और क्या भारतीय वृक्षों का स्थान विदेशी वृक्ष को देना उचित है? श्री के० एम० तिवारी ने इस प्रवृत्ति को ठीक नहीं माना और कहा—यह जरूर है कि हर एक चीज की अधिकता बुरी होती है। संभवतः अगर हम लोग अपने अच्छे-अच्छे पेड़ों जैसे आम, इमली, आंवला, अमरूद, जो कि फलदार वृक्ष हैं कहीं इनका स्थान युक्लिप्टस को देने लगें तो मैं समझूंगा कि यह गलत रास्ता होगा। "वैसे तो हम लोग जानते हैं कि बहुत सी प्रजातियां ऐसी हैं जिन्हें जानवर नहीं चरते और जिनमें अनेक गुण ऐसे हैं जो युक्लिप्टस के बराबर हैं लेकिन इस समय कुछ एक दस पन्द्रह सालों से युक्लिप्टस लगाने की जनता और वन विभाग में इतनी तेजी आ गई कि हम दूसरी प्रजातियों की ओर शायद उतना ध्यान नहीं दे पाए जितना कि अनुसंधान की दृष्टि से दिया जाना चाहिए था। लेकिन हमें भारतीय मूल की ऐसी प्रजाति को अवश्य ढूंढ़ना है।" □

3/77 नार्थ वेस्ट मोती बाग
नई दिल्ली-21

केन्द्र के समाचार

समन्वित ग्रामीण विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम : हरियाणा और सिक्किम अग्रणी

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इस वर्ष नवम्बर के अन्त तक लगभग 13 लाख 98 हजार परिवारों को लाभ पहुंचा। हरियाणा के केवल इसी माह में 7,424 परिवारों को इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लाया गया। इस प्रकार इस राज्य ने चालू वित्त वर्ष के शुरू के आठ महीनों में कुल 53,168 परिवारों को लाभ पहुंचा कर वार्षिक लक्ष्य का 95.3 प्रतिशत प्राप्त किया। केरल ने 72.3 प्रतिशत तथा पंजाब ने 68.9 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया। हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु और महाराष्ट्र का कार्य निष्पादन भी उत्साहवर्द्धक रहा।

सात राज्यों--राजस्थान, आन्ध्र प्रदेश, त्रिपुरा, गुजरात, मध्य प्रदेश, असम और कर्नाटक ने 43 से 51 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया।

पर्वतीय राज्य सिक्किम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण लोगों को रोजगार देने के वार्षिक लक्ष्य का 230.9 प्रतिशत पहले ही प्राप्त कर चुका हैं।

इस राज्य में पिछले औसत से नवम्बर तक रोजगार के 2 लाख 7 हजार आठ सौ से अधिक श्रम दिवस जुटाए गए। सिक्किम के बाद गुजरात, मणिपुर और हिमाचल प्रदेश का स्थान रहा। इन राज्यों ने क्रमशः 86.1 प्रतिशत, 83.9 प्रतिशत तथा 77.9 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया। योजना आयोग को प्राप्त विवरणों के अनुसार, पांच अन्य राज्यों ने 51 प्रतिशत से अधिक लक्ष्य प्राप्त किया जबकि चार राज्यों ने अपने लक्ष्य का 43 से 50.2 प्रतिशत प्राप्त किया।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के लिए अधिक धनराशि

हाल में ही शुरू किए गए, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम के लिए चालू वर्ष में एक अरब रुपये की राशि आबंटित की गई है और इसे बढ़ाकर पांच अरब का प्रावधान करने का प्रस्ताव है। यह महत्वपूर्ण कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन परिवार के कम से कम एक सदस्य को रोजगार गारन्टी देने के सरकार के प्रयासों में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। यह बात ग्रामीण विकास मंत्री श्री हरिनाथ मिश्र ने अपने मंत्रालय से सम्बद्ध संसदीय सलाहकार समिति की बैठक में बताई। उन्होंने कहा कि चालू वर्ष के दौरान 6 करोड़ श्रम दिनों तथा वर्ष 1984-85 में 30 करोड़ श्रम दिनों के अतिरिक्त रोजगार के अवसर सृजित होने की संभावना है। इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन में अच्छी प्रगति हुई है और नवम्बर 1983 में विभिन्न राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों से 39 परियोजनाएं प्राप्त हुई थीं तथा दिसम्बर 1983 में 75 और परियोजनाएं प्राप्त हुई हैं। मंत्री महोदय ने राज्य सरकारों, विधायकों तथा समाज के विभिन्न वर्गों से कार्यक्रम के समस्त लाभ ग्रामीण क्षेत्र के लोगों तक पहुंचाने को सुनिश्चित करने के लिए सक्रिय भूमिका निभाने का आह्वान किया।

विचार-विमर्श के दौरान सलाहकार समिति के सदस्यों ने कार्यक्रम के अमल पर कड़ी निगरानी रखने का सुझाव दिया ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि गांवों में भूमिहीन किसानों के लाभ के लिए आवंटित राशि का पूरा-पूरा उपयोग किया जा रहा है। यह भी सुझाव दिया गया कि गांवों में लघु रोजगार देने वाली योजनाएं प्रारम्भ की जानी चाहिए ताकि भूमिहीन लोगों को दूर-दूर जाकर रोजगार ढूंढने के स्थान पर गांव में ही यह लाभ मिल सके। एक सदस्य ने कहा कि ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से रोजगार उपलब्ध कराने के साथ ही गांवों का विकास भी हो सकेगा।

वन रोपण कार्यक्रम में उल्लेखनीय प्रगति

चालू वर्ष के दौरान वन क्षेत्र के फिर से विस्तार और प्राकृतिक वनस्पति के संरक्षण में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। वर्ष 1983–84 के नौ महीनों में ही 2 अरब 18 करोड़ पौधे लगाए जा चुके हैं जबकि पिछले वर्ष केवल 2 अरब 7 करोड़ 85 लाख पौधे लगाए गए थे। सामाजिक वानिकी योजना के अन्तर्गत अभी तक 3 लाख 76 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में वन लगाए जा चुके हैं जबकि 1983–84 के लिए 4 लाख हैक्टेयर का लक्ष्य रखा गया था। वर्ष 1982–83 के दौरान इसी योजना के अन्तर्गत 3 लाख 7 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में वन लगाए गए थे। आशा है कि सामाजिक वानिकी के अन्तर्गत मार्च 1984 तक बाकी 24 हजार हैक्टेयर क्षेत्र में वन लगाए जा सकेंगे।

वृक्षारोपण में सामान्य व्यक्ति के भाग लेने को सुनिश्चित करने के लिए अपने खेतों, आवासों एवं स्कूल और संस्थानों के चारों ओर वृक्ष लगाने के लिए पौधों का वितरण किया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत अभी तक एक अरब 9 करोड़ 60 लाख पौधों का वितरण किया जा चुका है जबकि लक्ष्य केवल एक अरब पौधों का ही था। वन विस्तार पर कार्य में शैक्षिक संस्थानों को शामिल करने के लिये "हर बच्चे के लिए एक पेड़" योजना का प्रावधान

है। गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र एवं हिमाचल प्रदेश में वानिकी कार्यक्रम में भूतपूर्व सैनिकों को भी शामिल किया जा रहा है।

वानिकी कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग नए लगाए गए पौधों को जीवित रखने के लिए विभिन्न उपाय करना है। इसके लिए केन्द्र एवं राज्य स्तर पर एक निगरानी व्यवस्था बनाई गई है। इस कार्यक्रम की प्रगति पर नजर रखने के लिए कृषि मंत्रालय के वानिकी प्रभाग के अधिकारी समय-समय पर विभिन्न राज्यों का दौरा करते हैं। रिपोर्टों के अनुसार इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सफलता की दर शुष्क क्षेत्रों में 60 प्रतिशत एवं अच्छी वर्षा और उपयुक्त जलवायु वाले क्षेत्रों में 90 से 95 प्रतिशत रही है।

गांवों को सामुदायिक टेलीविजन सेटों की मुफ्त सप्लाई

देश के कुछ गांवों में मुफ्त सामुदायिक टेलीविजन सेटों की व्यवस्था की गई है। इन गांवों का चयन इनसेट-1 उपदल 4 द्वारा नियत कसौटी के आधार पर सावधानीपूर्वक एवं विस्तृत अध्ययन किए जाने के बाद किया गया है। इनसैट के लिए कार्यक्रम सम्बन्धी योजना के कार्यदल द्वारा गठित अन्य उपदल ने भी इसकी अनुशंसा की है और अन्ततः मंत्रिमण्डल द्वारा उन्हें स्वीकृत किया गया है। इन चुने हुए क्षेत्रों में हिमाचल प्रदेश शामिल नहीं है।

क्षेत्रों के चयन की कसौटी उनकी दूरस्थता, संचार सुविधाओं का अभाव, पिछड़े लोगों की अधिक संख्या, जन संचार माध्यम का समर्थन चाहने वाली विकासीय गतिविधियां, दूरदर्शन कार्यक्रम निर्माण/संग्रहण के लिए पहले ही उपलब्ध अवस्थापना इत्यादि है। सामुदायिक अवलोकन सैट आन्ध्र प्रदेश के महबूब नगर, कुर्नूल और रंग रेड्डी जिलों, उड़ीसा के बोलांगी, ढेनकनाल और सम्बलपुर जिलों तथा महाराष्ट्र के नागपुर जिले के चुनींदा विद्युतीकृत गांवों में उपलब्ध किए गए हैं। □

✳ ✳ ✳ ✳ ✳ ✳ ✳ ✳ ✳ ✳

सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सुसंगत बनाया जाएगा

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत प्रत्येक 2000 व्यक्तियों के लिए उचित दर की एक दुकान खोले जाने का लक्ष्य रखा गया है। दूर-दराज के ग्रामीण और पहाड़ी इलाकों में लगभग 1,500 व्यक्तियों के लिए, और कई स्थानों पर 1000 व्यक्तियों के लिए भी ऐसी एक दुकान खोलना आवश्यक हो सकता है। "सहकारी समितियों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में वितरण और भारत के राष्ट्रीय सहकारी उपभोक्ता संघ की भूमिका" पर विचार-गोष्ठी की समापन बैठक में भाषण देते हुए केन्द्रीय योजना मंत्री और योजना आयोग के उपाध्यक्ष श्री एस० बी० चव्हाण ने कहा कि छठी पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष तक देश की पूरी जनसंख्या को आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराने के लिए, 3,50,000 उचित दर की दुकानें खोलने का लक्ष्य पूरा किया जाना है। उन्होंने यह भी कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में 50,000 से अधिक प्राथमिक ग्रामीण समितियां और 2,000 मध्यम दर्जे की समितियां आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण कर रही हैं। उन्होंने कहा कि जिन गांवों में अभी तक उचित दर कि दुकानें नहीं हैं वहां सातवीं योजना के अंत तक इनकी व्यवस्था कर दी जाएगी।

राष्ट्रीय उपभोक्ता सहकारी समिति संघ की भूमिका के बारे में संतोष व्यक्त करते हुए श्री चव्हाण ने कहा कि संघ ने ग्रामीण उपभोक्ता कार्यक्रम को मजबूत बनाने की दिशा में पहल की है और यह विश्वास व्यक्त किया कि यह पूर्ति व्यवस्था को बनाए रखने में सफल रहेगा।

मंत्री महोदय ने कहा कि 20-सूत्री कार्यक्रम का उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों को उपभोक्ता संरक्षण प्रदान करना है। ये कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां देश की 80 प्रतिशत जनता रहती है, बहुत तेज़ी से चलाए जाने की आवश्यकता है। □

चलता फिरता

गोबर गैस प्लांट

शक्ति द्विवेदी

राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में या वन्य भ्रमण के ऐसे क्षेत्रों में जहां बिजली की रोशनी नहीं है, खाना पकाने के लिए उच्च कोटि का ईंधन नहीं है, वहां सैलानी लोग बैलगाड़ी, ट्रैक्टर या ट्रक में लादकर अपने साथ चलता-फिरता यानि पोर्टेबल गोबर गैस प्लांट ले जा सकते हैं। यह आज की नवीनतम खोज है।

कुछ दिन पूर्व बीकानेर व जोधपुर के रेगिस्तानी क्षेत्रों में जहां कैम्पिग करके सैलानी लोग मरुधरा में सर्दियों की धूप का आनन्द लेते हैं, वहां इस तरह के पोर्टेबल गोबर गैस प्लांटों को ले जाया गया और ईंधन व रोशनी की जरूरत का प्रयोग सफल रहा।

इस गोबर गैस प्लांट के लिए सीमेंट की टंकी या जमीन के नीचे गड्ढा बनाना आवश्यक नहीं है। इसीलिए इसे विभिन्न आकारों में स्टील के ट्यूबों से बने दो सिलिण्डरों के साथ फिट करके बना लिया जाता है। इसमें दो स्थान पर सिलिन्डर में छेद बनाने होते हैं। इनमें से एक गोबर भरने के लिए और दूसरा छेद गोबर से गैस निकलने के लिए होता है।

गोबर गैस या जव-गैस के क्षेत्र में यह अद्भुत क्रांति है जिसे एक शहरी व्यक्ति ने तैयार किया है। यह माडल किसी भी अन्य स्थाई गोबर गैस प्लांट के नमूने से स्पर्धा कर सकता है। सामान्य या परम्परागत मॉडल 10 दिन में काम शुरू कर पाता है। किंतु चलता-फिरता यह गोबर गैस प्लांट दस दिन से भी कम समय में काम करना आरम्भ कर देता है।

इस पोर्टेबल गोबर गैस प्लांट को बनाने की योजना महर्षि कृषि अनुसंधान विश्वविद्यालय, गुजरात द्वारा आरम्भ की गई थी। इस काम पर 22 साल से ऊर्जा स्रोतों के क्षेत्र में काम करने वाले अनुभवी वैज्ञानिक डा० अरविंद पंड्या ने सफलता प्राप्त की। ऊर्जा के गैर-परम्परागत साधनों पर इस वैज्ञानिक की विशेष योग्यता है। इसीलिए इन्हें इसमें सफलता मिली है।

महर्षि कृषि अनुसंधान विश्वविद्यालय के अध्यक्ष एवं गुजरात विश्वविद्यालय के भतपूर्व उपकुलपति श्री ईश्वर भाई पटेल ने इस संयंत्र की परीक्षा करके कई बातें स्पष्ट कीं। उन्होंने बताया, इसका धातु का बना सिलिण्डर गर्मी को तेजगति से पचाता है। जबकि, भूमितल के नीचे का बना गोबर गैस प्लांट ऐसा नहीं करता। क्योंकि, भूगत संयंत्र का केवल एक भाग ही सूर्य की धूप की ओर खुला रहता है। इसके यानि पोर्टेबल प्लांट के सिलिण्डर का समूचा स्वरूप ही धूप की ओर रहता है और जल्दी गर्म हो जाता है। पोर्टेबल या चलते-फिरते संयंत्र द्वारा ज्यादा धूप को जज्ब करने से गोबर के गलने या सड़ने की क्रिया में तेज प्रतिक्रिया होती है और गोबर-पानी मिल कर ज्यादा मात्रा में गस बनाने में सफल होते हैं। साथ-साथ पोर्टेबल प्लांट को कहीं जमाकर रखने की भी आवश्यकता नहीं होती।

इस विश्वविद्यालय के श्री अरविन्द पंड्या ने बड़े मॉडल या आकार का भी गोबर गैस संयंत्र तयार किया है। इन दोनों प्रकार के गोबर गैस प्लांटों की कीमत लगभग 5000 रुपये ही पड़ती है। यह प्लांट सात व्यक्तियों तक के परिवार हेतु ईंधन व रोशनी आसानी से जुटा लेता है। इसे चलाने के लिए तीन से लेकर 5 तक पशुओं का गोबर काफी रहता है।

इससे भी छोटा माडल जो श्री पंड्या ने तैयार किया है, वह चलता-फिरता, यानि पोर्टेबल है। वह तीन व्यक्तियों तक के परिवार हेतु काफी है। इसके सफल प्रयोग किए जा चुके हैं। ऐसा अंदाजा लगाया गया है कि ज्यादा संख्या में छोटे पोर्टेबल गोबर गैस प्लांटों का निर्माण करने पर एक सट की कीमत लगभग एक हजार रुपये ही आएगी। जल्दी ही जब ये ज्यादा संख्या में बनकर बाजार में आएंगे तो पैट्रोल गैस के चूल्हों के पहुंच के बाहर की ग्रामीण जनता हेतु अवश्य ही वरदान सिद्ध होंगे और छोटे किसान परिवार जो एक दो मवेशी पालते हैं, इनके उपयोग से लाभ उठा सकेंगे। □

बी० 25, गुलमोहर पार्क,
नई दिल्ली—48

आर०एन०/708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी(डी एन) 98
पूर्व भुगतान के बिना सिविल लाइन्स डाकघर, दिल्ली में डाक में डालने की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

RN/708/57
P & T Regd. No. D(DN) 98
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delhi.

गांवों के पारम्परिक हस्तशिल्प को विशेष प्रोत्साहन दिया जा रहा है ।

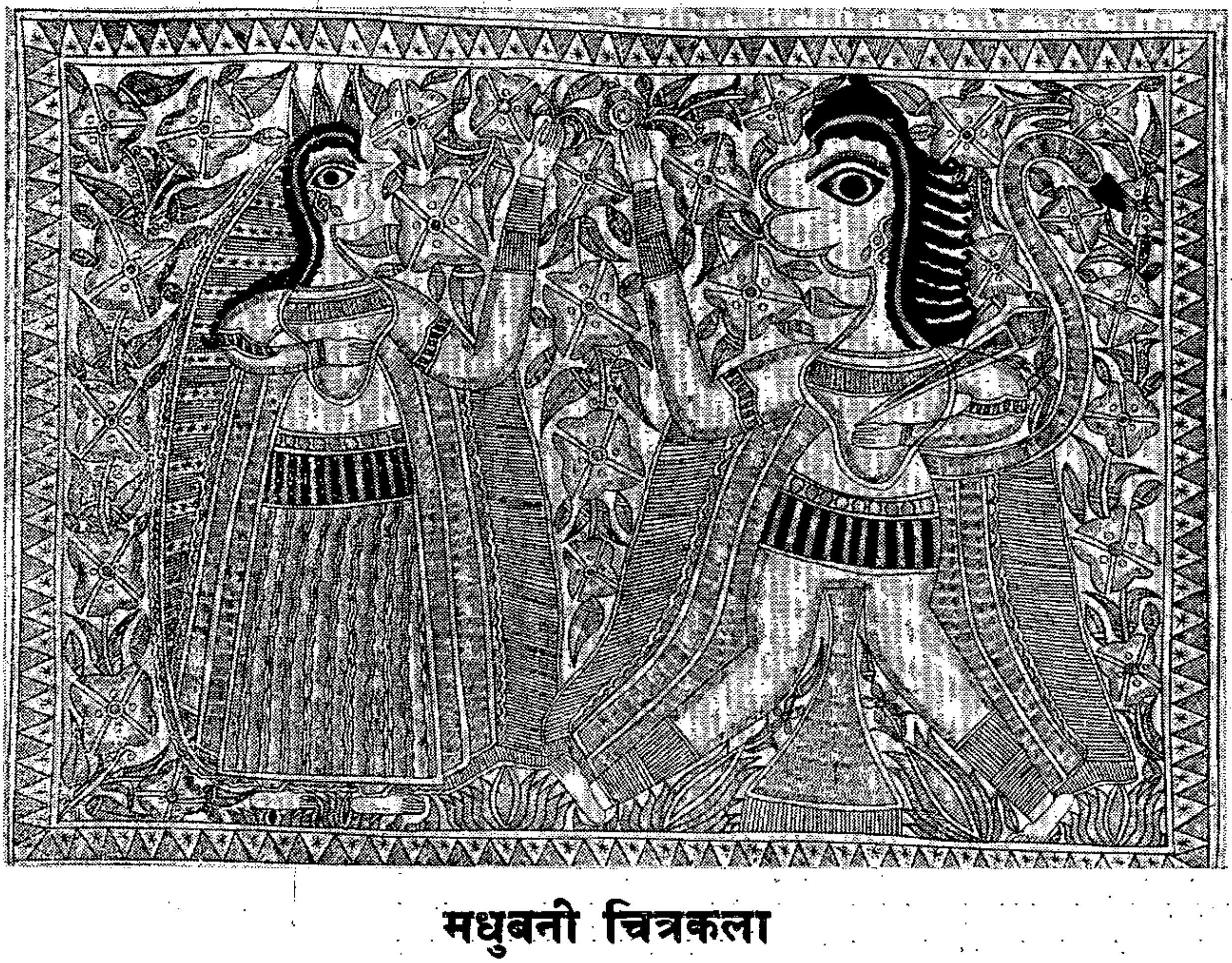

मधुबनी चित्रकला

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।